

कल्याण

मूल्य ८ रुपये



वर्ष
९०

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
१२

रथारूढ़ श्रीकृष्ण और अर्जुन



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



KAPWING

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः । नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमोऽस्तु ते ॥
नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्यै ते नमो नमः । सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्त्यै ॥

वर्ष
१०

गोरखपुर, सौर पौष, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, दिसम्बर २०१६ ई०

संख्या
१२

पूर्ण संख्या १०८१

जय जय जय गणपति गणनायक !

जय जय जय गणपति गणनायक !
करुणासिन्धु, बन्धु जन-जनके, सिद्धि-सदन, सेवक-सुखदायक ॥
कृष्णस्वरूप, अनूप-रूप अति, विघ्न-बिदारण, बोध-विधायक ।
सिद्धि-बुद्धि-सेवित, सुषमानिधि, नीति-प्रीति-पालक, वरदायक ॥
शंकर-सुवन, भुवन-भय-वारण, वारन-वदन, विनायक-नायक ।
मोदकप्रिय, निज-जन-मन-मोदक, गिरि-तनया-मन-मोद-प्रदायक ॥
अमल, अकल अरु सकल-कलानिधि, रिद्धि-सिद्धिदायक, सुरनायक ।
ज्ञान-ध्यान-विज्ञान दान करि, निज-जन-मनवाञ्छित फल-दायक ॥
प्रथम-पूज्य, सुरसेव्य एक-रद, सदा एकरस, खल-दल-शायक ।
बिद्या-बल-विवेक-वर-वारिधि, विश्ववन्द्य, विबुधाधिप-नायक ॥
चरण-शरण-जन जानि दयानिधि! देहु एक यह वर वरदायक ।
जन-जनमें हो नीति-प्रीति नित, रहे न कोउ विषय-विष-पायक ॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,१५,०००)

कल्याण, सौर पौष, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, दिसम्बर २०१६ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- जय जय जय गणपति गणनायक !	३	१४- कश्मीर-प्रदेशके शक्तिपीठ (पं० श्रीजानकीनाथजी कौल	
२- कल्याण	५	‘कमल’, एम० ए०, बी० टी०, प्रभाकर)	२७
३- श्रीकृष्णद्वारा अर्जुनको उपदिष्ट गीताका सार		१५- माता सारिका देवी	२८
[आवरणचित्र-परिचय]	६	१६- कैसे बनें भगवान् के प्रेमी भक्त ?	
४- मैं कौन हूँ और मेरा क्या कर्तव्य है ?		(डॉ० श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति)	२९
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	७	१७- प्रभो ! आपको कैसे प्रसन्न करें ?	
५- भक्तकी बात (स्वामी श्रीभोलेबाबाजी)	९	[श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग]	
६- मानव जीवनकी धन्यता (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज) .	१०	(आचार्य श्रीरामरंगजी)	३३
७- भजनकी आवश्यकता		१८- डेंगू बुखारका आसान आयुर्वेदिक उपचार	
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ..	११	(डॉ० श्रीदिलीपकुमारजी)	३४
८- ‘.....ताहि बोड तू फूल !’ (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)	१४	१९- रामदास काठियाबाबा [संत-चरित] (श्रीरामलालजी)	३५
९- साधकोंके प्रति—		२०- साधनोपयोगी पत्र	३८
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१७	२१- व्रतोत्सव-पर्व [माघमासके व्रतपर्व]	४०
१०- आदर्श कर्मठता [प्रेरक-प्रसंग]	१९	२२- व्रतोत्सव-पर्व [फाल्गुनमासके व्रतपर्व]	४१
११- उद्धार और अधोगति (श्रीबजरौरसिंहजी)	२०	२३- कृपानुभूति	४२
१२- जय जय दशरथनन्दन ! राम !!		२४- पढ़ो, समझो और करो	४३
(आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र ‘विनय’)	२१	२५- मनन करने योग्य	४६
१३- माँकी कृपा		२६- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक	
(महात्मा श्रीश्रीसीतारामदास ॐकारनाथजी महाराज)	२२	विषय-सूची	४७

चित्र-सूची

१- रथारूढ़ श्रीकृष्ण और अर्जुन	(रंगीन) ... आवरण-पृष्ठ	५- श्रीकुलवागीश्वरी देवी	(इकरंगा)	२८
२- भगवान् गणपति	(") मुख-पृष्ठ	६- संत श्रीरामदास काठियाबाबा	(")	३५
३- रथारूढ़ श्रीकृष्ण और अर्जुन	(इकरंगा)	७- भगवान् श्रीकृष्ण और पौण्ड्रक	(")	४६
४- श्रीशारिका देवी	(")			

एकवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹२२०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥

जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥

जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail }
सजिल्द शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 (₹3000)
पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15,000)

{ Us Cheque Collection
{ Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹११००

संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक — डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोविन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क — व्यवस्थापक — ‘कल्याण-कार्यालय’, पो० गीताप्रेस — २७३००५, गोरखपुर को भेजें।

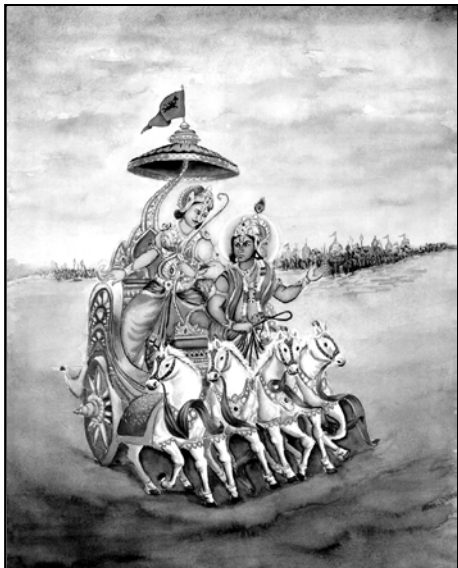
Online सदस्यता-शुल्क — भुगतान हेतु — gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

अब ‘कल्याण’ के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

‘शिव’

आवरणचित्र-परिचय

श्रीकृष्णद्वारा अर्जुनको उपदिष्ट गीताका सार



१. सांसारिक मोहके कारण ही मनुष्य ‘मैं क्या करूँ और क्या नहीं करूँ’—इस दुविधामें फँसकर कर्तव्यच्युत हो जाता है। अतः मोह या सुखासक्तिके वशीभूत नहीं होना चाहिये।

२. शरीर नाशवान् है और उसे जाननेवाला शरीरी अविनाशी है—इस विवेकको महत्त्व देना और अपने कर्तव्यका पालन करना—इन दोनोंमेंसे किसी भी एक उपायको काममें लानेसे चिन्ता-शोक मिट जाते हैं ।

३. निष्कामभावपूर्वक केवल दूसरोंके हितके लिये अपने कर्तव्यका तत्परतासे पालन करनेमात्रसे कल्याण हो जाता है।

४. कर्मबन्धनसे छूटनेके दो उपाय हैं—कर्मोंके तत्त्वको जानकर निःस्वार्थभावसे कर्म करना और तत्त्वज्ञानका अनुभव करना।

५. मनुष्यको अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियोंके आनेपर सुखी-दुखी नहीं होना चाहिये; क्योंकि इनसे सुखी-दुखी होनेवाला मनुष्य संसारसे ऊँचा उठकर परम आनन्दका अनुभव नहीं कर सकता।

६. किसी भी साधनसे अन्तःकरणमें समता आनी चाहिये। समता आये बिना मनुष्य सर्वथा निर्विकल्प नहीं हो सकता।

७. सब कुछ भगवान् ही हैं—ऐसा स्वीकार कर लेना

सर्वश्रेष्ठ साधन है ।

८. अन्तकालीन चिन्तनके अनुसार ही जीवकी गति होती है। अतः मनुष्यको हरदम भगवान्‌का स्मरण करते हुए अपने कर्तव्यका पालन करना चाहिये, जिससे अन्तकालमें भगवान्‌की स्मृति बनी रहे।

९. सभी मनुष्य भगवत्प्राप्तिके अधिकारी हैं, चाहे वे किसी भी वर्ण, आश्रम, सम्प्रदाय, देश, वेश आदिके क्यों न हों।

१०. संसारमें जहाँ भी विलक्षणता, विशेषता, सुन्दरता, महत्ता, विद्वत्ता, बलवत्ता आदि दीखे, उसको भगवान्‌का ही मानकर भगवान्‌का ही चिन्तन करना चाहिये।

११. इस जगत्को भगवान्का ही स्वरूप मानकर प्रत्येक मनुष्य भगवान्के विराटरूपके दर्शन कर सकता है।

१२. जो भक्त शरीर-इन्द्रियाँ-मन-बुद्धिसहित अपने-आपको भगवान्‌के अर्पण कर देता है, वह भगवान्‌को प्रिय होता है।

१३. संसारमें एक परमात्मतत्त्व ही जाननेयोग्य है।
उसको जाननेपर अमरताकी प्राप्ति हो जाती है।

१४. संसार-बन्धनसे छूटनेके लिये सत्त्व, रज और तम—इन तीनों गुणोंसे अतीत होना जरूरी है। अनन्यभक्तिसे मनुष्य इन तीनों गुणोंसे अतीत हो जाता है।

१५. इस संसारका मूल आधार और अत्यन्त श्रेष्ठ परमपुरुष एक परमात्मा ही हैं—ऐसा मानकर अनन्यभावसे उनका भजन करना चाहिये।

१६. दुर्गुण-दुराचारोंसे ही मनुष्य चौरासी लाख योनियों एवं नरकोंमें जाता है और दुःख पाता है। अतः जन्म-मरणके चक्रसे छूटनेके लिये दुर्गुण-दुराचारोंका त्याग करना आवश्यक है।

१७. मनुष्य श्रद्धापूर्वक जो भी शुभ कार्य करे, उसको भगवान्‌का स्मरण करके नामका उच्चारण करके ही आरम्भ करना चाहिये।

१८. सब ग्रन्थोंका सार वेद हैं, वेदोंका सार उपनिषद् हैं, उपनिषदोंका सार गीता है और गीताका सार भगवान्की शरणागत है। जो अनन्यभावसे भगवान्की शरण हो जाता है, उसे भगवान् सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त कर देते हैं।

मैं कौन हूँ और मेरा क्या कर्तव्य है ?

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

प्रत्येक मनुष्यको विचार करना चाहिये कि 'मैं कौन हूँ' और 'मेरा क्या कर्तव्य है ?' मैं नाम, रूप—देह, इन्द्रिय, मन या बुद्धि हूँ या इनसे कोई भिन्न वस्तु हूँ ? विचारपूर्वक निर्णय करनेसे यही बात ठहरती है कि मैं नाम नहीं हूँ, मुझे आज जयदयाल कहते हैं, परंतु जब प्रसव हुआ था, उस समय इसका नाम जयदयाल नहीं था। यद्यपि मैं मौजूद था। घरवालोंने कुछ दिन बाद नामकरण किया। उन्होंने उस समय जयदयाल नाम न रखकर महादयाल रखा होता तो आज मैं महादयाल कहलाता और अपनेको महादयाल ही समझता ! मैं न पूर्वजन्ममें जयदयाल था, न गर्भमें जयदयाल था और न शरीरनाशके बाद जयदयाल रहूँगा। यह तो केवल घरवालोंका निर्देश किया हुआ सांकेतिक नाम है। यह नाम एक ऐसा कल्पित है कि जो चाहे जब बदला जा सकता है और उसीमें उसका अभिमान हो जाता है। जो विवेकवान् पुरुष इस रहस्यको समझ लेता है कि मैं नाम नहीं हूँ, वह नामकी निन्दा-स्तुतिसे कदापि सुखी-दुखी नहीं होता। जब वह मनुष्य 'नाम' की निन्दा-स्तुतिमें सम नहीं है, निन्दा-स्तुतिमें सुखी-दुखी होता है तब वह नाम न होनेपर भी 'नाम' बना बैठा है, जो सर्वथा भ्रमपूर्ण है। जो इस रहस्यको जान लेता है, उसमें इस भ्रमकी गन्धमात्र भी नहीं रहती। इसीलिये श्रीभगवान्ने तत्त्ववेत्ता पुरुषोंके लक्षणोंको बतलाते हुए उन्हें निन्दा और स्तुतिमें सम बतलाया है—

'तुल्यनिन्दास्तुतिः.....' (गीता १२।१९)

'तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः' (गीता १४।२४)

फिर यह प्रसिद्ध भी है कि जयदयाल 'मेरा' नाम है, 'मैं' जयदयाल नहीं हूँ। इससे यह सिद्ध हुआ नाम 'मैं' नहीं हूँ।

इसी प्रकार रूप—देह भी मैं नहीं हूँ; क्योंकि देह जड़ है और मैं चेतन हूँ, देह क्षय, वृद्धि, उत्पत्ति और विनाशधर्मवाला है, मैं इनसे सर्वथा रहित हूँ। बालकपनमें देहका और ही स्वरूप था, युवापनमें दूसरा था और अब कुछ और ही है, किंतु मैं तीनों अवस्थाओंको जाननेवाला हूँ। मैं तो नाम है, जो किसी पुरुषने मुझको बाल्यावस्था में

देखा था, अब वह मुझसे मिलता है तो मुझे पहचान नहीं सकता। देहका रूप बदल गया। शरीर बढ़ गया, दाढ़ी-मूँछें आ गयीं। इससे वह नहीं पहचानता। किंतु मैं पहचानता हूँ, मैं उससे कहता हूँ, आपका शरीर युवावस्थासे वृद्ध होनेके कारण उसमें कम अन्तर पड़ा है, इससे मैं आपको पहचानता हूँ। मैंने आपको अमुक जगह देखा था। उस समय मैं बालक था, अब मेरे शरीरमें बहुत परिवर्तन हो गया, अतः आप मुझे नहीं पहचान सके। इससे यह सिद्ध होता है कि शरीर 'मैं' नहीं हूँ। 'शरीर मैं हूँ' ऐसा अभिमान भी पूर्वोक्त नामके समान ही सर्वथा भ्रमपूर्ण है। जो पुरुष इस रहस्यको जानते हैं, वे शरीरके मानापमान और सुख-दुःखमें सर्वथा सम रहते हैं; क्योंकि वे इस बातको समझ जाते हैं कि मैं शरीरसे सर्वथा पृथक् हूँ। इसीलिये तत्त्ववेत्ताओंके लक्षणोंमें भगवान् कहते हैं—

'समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।'

(गीता १२।१८)

'मानापमानयोस्तुल्यः' (गीता १४।२५)

'समदुःखसुखः' (गीता १४।२४)

अतएव विचार करनेसे यह प्रत्यक्ष सिद्ध होता है कि यह जड़ शरीर मैं नहीं हूँ, मैं इस शरीरका ज्ञाता हूँ; और प्रसिद्धि भी यही है कि शरीर 'मेरा' है। मनुष्य भ्रमसे ही शरीरमें आत्माभिमान करके इसके मानापमान और सुख-दुःखसे सुखी-दुखी होता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि मैं शरीर नहीं हूँ।

इसी तरह इन्द्रियाँ भी मैं नहीं हूँ। हाथ-पैरोंके कट जाने, आँखें नष्ट हो जाने और कानोंके बहरे हो जानेपर भी मैं ज्यों-का-त्यों पूर्ववत् रहता हूँ, मरता नहीं। यदि मैं इन्द्रिय होता तो उनके विनाशमें मेरा विनाश होना सम्भव था। अतएव थोड़ा-सा भी विचार करनेपर यह प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि मैं जड़ इन्द्रिय नहीं हूँ, वरं इन्द्रियोंका द्रष्टा या ज्ञाता हूँ।

इसी प्रकार मैं मन भी नहीं हूँ। सुषुप्तिकालमें मन नहीं रहता, परंतु मैं रहता हूँ। इसीलिये जागनेके बाद मुझको इस बातका ज्ञान है कि मैं सुखसे सोया था। मैं मनका

* शरणका सार अर्थ है—श्रद्धा और प्रेमपूर्वक निष्काम भावसे प्रभुकी आज्ञाका पालन करना, गुण और प्रभावसहित उनके स्वरूपका चिन्तन करना एवं हमारे कर्मोंके अनुसार परमेश्वरकृत सुख-दुःखादि विधानमें सर्वथा समचित्त रहना। शरणागतिका विशेष वर्णन देखना हो तो ‘तत्त्वचिन्तामणि’ [कोड 683] नामक गीताप्रेससे प्रकाशित पुस्तक देखनी चाहिये।

भक्तकी बात

(स्वामी श्रीभोलेबाबाजी)

(१) संसार दुःखका भण्डार, निस्सार है, भगवद्-भजन ही सार है, जिसने ईश्वरकी शरण ली, उसका बेड़ा निश्चय होता पार है, जो ईश्वरसे विमुख हुआ, वह जन्मता-मरता बारम्बार है!

(२) भगवान्‌के अर्चनसे, भगवन्नामके जपसे, भगवन्मूर्तिके ध्यानसे, भगवद्गुण-कीर्तनसे, हरिके स्मरणसे, भगवान्‌की पुण्यकथाके श्रवणसे, भगवान्‌की वन्दना करनेसे, शिवके सेवनसे, भगवान्‌के चरणोदकका पान करनेसे, भगवान्‌को निवेदन किया हुआ भोजन करनेसे, भगवान्‌को सब कर्म अर्पण करनेसे, ईश्वरको आत्म-निवेदन करनेसे, भक्तोंके पुण्य संसर्गसे, पुण्यतीर्थके सेवन करनेसे मनुष्योंकी भगवान्‌में भक्ति उत्पन्न होती है।

(३) जहाँ श्रीहरिका पूजन और शंकरका स्मरण नहीं होता, वहाँ नित्य ही मनुष्य अपना सिर पीटते रहते हैं, इसमें संशय नहीं है और जहाँ ये दोनों होते हैं, वहाँ सदा शान्ति निवास करती है।

(४) तभीतक जन्म-मरणरूप संसार है, जबतक मुक्ति नहीं होती और विश्वनाथमें प्रीति हुए बिना करोड़ों जन्मोंमें भी मुक्ति होना सम्भव नहीं।

(५) जिनके चित्त काम-क्रोधसे अन्धे हो रहे हैं, जो अज्ञानी और संशय-आत्मा हैं, उनमें ब्रह्माण्डको पवित्र करनेवाला प्रेम होना दुर्लभ है।

(६) जो विषयोंमें दोष देखता है और जगन्नाथमें सुख, शान्ति एवं कल्याण देखता है, वह संसार-समुद्रसे शीघ्र ही पार हो जाता है।

(७) उत्तम कुलमें जन्म, यज्ञ-सूत्र, विद्या और दीक्षा निष्फल ही हैं, यदि मनुष्यकी आदि अव्यय पुरुष विष्णुमें भक्ति न हो।

(८) भक्तोंका हृदय-क्षेत्र मुकुन्द भगवान्का प्रिय मन्दिर है। भक्तोंके हृदयमें भगवान् लीला और विनोद करते हैं।

(९) भगवान्की महिमा भागवतमें—भक्तमें दिन-रात भासती है। सत्-शास्त्रका शुद्ध व्याख्यान भक्तका कर्म है।

(१०) ईश्वर दुर्विज्ञेय है, भक्तके देहद्वारा प्रकाशित होता है, इसलिये सुभक्तोंका संग मुक्तिका देनेवाला है।

(११) भक्तका अपना-पराया नहीं होता, समस्त वसुधा उसका कुटुम्ब है; क्योंकि सबमें वह एक अपने आत्मा महाविष्णुको ही देखता है।

(१२) धनसे क्लेश, मद, हिंसा उत्पन्न होती है और धर्मकी भी हानि होती है, इसलिये भक्त भवेश्वरसे धन नहीं माँगता, केवल भक्ति ही माँगता है।

(१३) देह दुःखमय, दीनतामय, अशुद्ध और विनश्वर है, ऐसा समझकर भक्त जनार्दनसे देहके सुखके लिये प्रार्थना नहीं करता, ईश्वरकी भक्तिके लिये ही प्रार्थना करता है।

(१४) कामसे वीर्य, धर्म, बुद्धि और सत्य सभीका नाश होता है, इसलिये भक्त सर्व कामनाओंको त्यागकर भगवच्चरणोंमें ही प्रीति करता है।

(१५) भोग-सुखकी तो बात ही क्या है, सच्चा भक्त दुर्लभ कैवल्य-पदकी भी वाञ्छा नहीं करता, किंतु भगवच्चरणाम्बुजकी दृढ़ भक्ति ही चाहता है।

(१६) भक्त सर्वदा इस प्रकार भगवान्से प्रार्थना करता है—हे भगवन्! मेरी वाणी सर्वदा आपके पवित्र नामका कीर्तन करे, मेरे हाथ निरन्तर आपके पाद-कमलोंका सेवन करें, मेरे श्रोत्र नित्य आपके कथामृतका पान करें, मेरा मन आपके शान्तिमय चरणोंका ही सदा स्मरण करे, मेरे हृदयाकाशमें कोटि सूर्यसम प्रभावाले आप निवास करें, हे जनार्दन! जब मेरा चित्त आपके चरणोंसे विमुख हो तब हे दयासागर! उसे अपने चरणोंमें ही लगा लीजिये। हे महेश्वर! मैं सदा आपका ही ध्यान करूँ, आपको ही सर्वत्र देखूँ, आपको ही नमस्कार करूँ,

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

ऐसा कीजिये। हे जगत्-बन्धो! आपको नमस्कार है। हे परमात्मन्! आपको नमस्कार है। हे विश्वेश्वर! आपको नमस्कार है। हे देवादिदेव, हे परिपूर्णस्वरूप! आपको नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है।

(१७) ब्रह्म ही केवल सत्य है, जगत् मिथ्या है, ब्रह्म ही मैं हूँ, मैं ही ब्रह्म है, ऐसा ज्ञान मुक्तिका देनेवाला है।

(१८) ध्यानसे निर्मल अन्तःकरणमें वैराग्य और ज्ञान उत्पन्न होता है, इसलिये नित्य शुद्ध और निर्मल मनकी अपेक्षा है। चाहे सगुण-साकारका ध्यान करे, चाहे निर्गुण-निराकारका ध्यान करे, अपने इष्टदेवको परिच्छिन्न कभी न समझे।

(१९) मनको निर्विषय करके परम अद्वय महाशम्भु देवका निरन्तर ध्यान करे।

(२०) ऊपर पूर्ण है, नीचे पूर्ण है, मध्य पूर्ण है, सदात्मक है, सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म है, पुरुष है, ब्रह्म है, विष्णु है, सर्वगत है, विभु है, अज है, सत्य है, ध्रुव है, नित्य है, शाश्वत है, सनातन है, निराकार है, निराधार है, निरालम्ब है, निराश्रय है, अविभक्त है, अखण्ड है, निष्कल है, निरंशक है, एकरूप है, सदा शान्त है, निर्भेद है, सुस्थिर है, सम है, धूमरहित अग्निके समान है, सर्वतेजोमय परम देव है, भा-

रूप है, पूर्ण चैतन्य है, स्वप्रकाश है, चिदात्मक है, आनन्द है, परमानन्द है, पूर्णानन्द है, महाशिव है, भूमानन्द, सदानन्द, परानन्द, परात्पर है। ऐसे ध्यानसे सत्य-परावर ब्रह्मका साक्षात्कार होते ही सब कर्म छूट जाते हैं और समस्त बन्धन टूट जाते हैं।

(२१) सुख-दुःखमें जिसके मुखकी प्रभा नित्य एक-सी रहती है, जो आत्मामें तृप्त है, आत्मामें ही सन्तुष्ट है, आत्मामें ही क्रीडा करता है, आत्मामें ही रति करता है, निन्दा सुनकर जिसके मनमें क्षोभ नहीं आता और प्रशंसा सुनकर जो हर्षित नहीं होता, वही भक्त है, वही जीवन्मुक्त है, वही महात्मा है, वही सेवनीय और पूजनीय है।

(२२) जो जाग्रत्-अवस्थामें सुप्तके समान बर्तता है, सब दोषोंसे निर्मुक्त है, मरनेकी जिसको चिन्ता नहीं, जीनेकी इच्छा नहीं, जो जगत्में जड नहीं देखता किंतु सर्व चिन्मय देखता है, सदा ही जिसको ब्रह्मभाव है, वह भक्त जीवन्मुक्त वसुधाको पवित्र करनेवाला है। ब्रह्मादि देवता भी उसको नमस्कार करते हैं।

(२३) जो सब तजता है, हरि भजता है, वह बिना इच्छा किये हुए भी मुक्त ही है, इसमें संशय नहीं है।

मानव जीवनकी धन्यता

(पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज)

ए मन तुम गाओ गान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥
 दिखता है भाव महान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥
 चाहे कितना दुःख सुख होवे, तू कर्मों से ना विमुख होवे।
 निकले अन्तर से तान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥
 रहना हो घर में या वन में, चिन्ता न रहे कोई मन में।
 है सहज सुलभ सद् ज्ञान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥
 सुख साम्राज्य पाये तो क्या, या सर्वस खो जाये तो क्या।
 भक्तों को तो अभिमान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥
 फल ये ही मानव जीवन का, सम्बन्ध छोड़ धन वैभव का।
 पा जाये परम स्थान यहीं, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥
 मिलती इससे सच्ची सद्गति है, यह कितनी सुन्दर सम्पत्ति है।
 बस रहे 'पथिक' का ध्यान यही, हरिः शरणम् हरिः शरणम्॥

भजनकी आवश्यकता

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

जो सबसे बढ़कर प्रियतम हो, जो प्राणोंका आधार हो, जो जीवनका एकमात्र अवलम्बन हो, जिसकी स्मृति और मिलनकी आशा ही जीवनमें प्रतिपल चेतना प्रदान करती हो, उसे क्षणभरके लिये भी कैसे भुलाया जा सकता है ? कोई कहे कि दिन-रातमें दो घण्टे भले ही उसे स्मरण कर लिया करो, शेष बाईस घण्टे घरके दूसरे आवश्यक कामोंमें खर्च किया करो, तो ऐसा करना उस प्रेमीके लिये कैसे सम्भव हो सकता है ? उसे कितने ही घण्टे कुछ भी काम क्यों न करना पड़े, वह करेगा अपने प्रियतमका स्मरण करते हुए ही। उसे वह क्षणभरके लिये भी अपने हृदय-मन्दिरसे अलग नहीं कर सकता। हृदयमें उसकी झाँकी सदा खुली रहेगी, वह उसके दर्शन करता हुआ ही यन्त्रकी भाँति शरीरसे कार्य करता रहेगा। ऐसे अनन्यचेता सतत और नित्य चिन्तनमें लगे रहनेवाले प्रेमीको भगवान् नित्य प्राप्त ही रहते हैं, वे उसकी अन्तर्दृष्टिसे कभी ओझल हो ही नहीं सकते। इसी स्थितिको प्राप्त भक्त सुरदासने कहा था—

हाथ छुड़ाये जात हौ निबल जानिकै मोहिं।

हिरदै तें जब जाहूगे सबल बढौंगो तोहिं ॥

इसी तन्मयतामें लीन गोपियाँ प्रतिक्षण प्रत्येक कार्य करते समय प्रियतम श्यामसुन्दरके गुणगान करती हुई आँसू बहाया करती थीं। भाग्यशालिनी व्रजांगनाओंकी बड़ाई करते हुए भागवतकार भगवान् व्यास कहते हैं—

या दोहनेऽवहनने मथनोपलेप-

प्रेङ्खेननार्भरुदितो क्षणमार्जनादौ ।

गायन्ति चैनमनुरक्तधियोऽश्रुकण्ठ्यो

धन्या व्रजस्त्रिय उरुक्रमचित्तयानाः ॥

उन श्रीकृष्णमें चित्तको अनुरक्त रखनेवाली
व्रजवनिताओंको धन्य है, जो गौ दुहते, दधि-मंथन
करते, घर लीपते, झूला झूलते, रोते हुए बालकोंको लोरी
सुनाते, झण्ड देते, चौका लगाते तथा विधायन करते—सब

समय सर्वदा पवित्र-कीर्ति भगवान् श्रीकृष्णको अपने सामने देखकर नेत्रोंसे प्रेमके आँसू बहाती हुई गद्गद स्वरसे उनका गुण गाया करती हैं।

भगवान्‌को याद रखनेका उपदेश, घण्टे-दो-घण्टे या अधिक नियमित कालके लिये नाम-जपकी आज्ञा, इतनी संख्या पूरी करनेपर सिद्धि हो जायगी, इस लोभसे संख्यायुक्त जप या संख्याकी गणनासे जप हो जाता है, यों भूल रह जाना सम्भव है, इसलिये संख्याकी अवधि बाँधकर जप करना चाहिये—यह आदेश तो उन आरम्भिक साधकोंके लिये है, जो भगवान्‌के प्रेमी नहीं हैं; न करनेकी अपेक्षा ऐसा करना बहुत उत्तम है। प्रेम प्राप्त होनेपर यह कहना नहीं पड़ता कि अमुक समयतक अमुक संख्यासे उन्हें याद किया करो। संख्या या समयका हिसाब कौन रखे? जब एक क्षणभरके लिये स्मृति चित्तसे नहीं हटती, तब हिसाब-किताबकी बात ही कहाँ रह जाती है? श्रीरामचरितमानसमें भगवान् श्रीरामको सीताका सन्देश सुनाते हुए श्रीहनुमान्‌जी कहते हैं कि ‘प्रभो! सीता प्राण-त्याग करना चाहती हैं, परंतु प्राण निकल नहीं पाते’ सीताजीने कहा है—

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।

xxxx जाहिं प्रान केहिं बाट ॥

प्राण कैद हो गये। आठों पहर आपके ध्यानके किंवाड़ लगे रहते हैं। आपका ध्यान कभी छूटता नहीं आपकी श्याम-तमाल माधुरी-मूर्ति कभी मनके नेत्रोंसे परे होती ही नहीं। यदि कभी किंवाड़ खोले भी जायँ तो बाहर रात-दिन पहरा लगता है। पहरदार कौन है? रामनाम, क्षणभरके लिये राम-नाम लेनेसे जिह्वा विराम नहीं लेती। प्राण कैसे निकलें? ऐसी स्थितिमें क्या सीताको इस उपदेशकी अपेक्षा थी कि तुम अशोकवाटिकामें अकेली रहती हो, समय बहुत मिलता है, इसके सिवा

aroma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

रक्षासयोंका डर रहता है, इसलिये कुछ देर रामकी याद

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

कर लिया करो। यह उपदेश या तो अभक्तोंके लिये है
या प्रेमहीन रँगरूटोंके लिये।

प्रेमीजनोंको तो अपने प्रेमास्पदका नाम इतना प्यारा होता है कि स्वयं तो वे उसे कभी भूल ही नहीं सकते; दूसरेको कभी भूले-भटके उच्चारण करते सुन लेते हैं, तो उसकी चरण-धूलि लेने दौड़ते हैं। प्रियतमका नाम लेनेवाला, प्रियतमका गुण गानेवाला, प्रियतमका प्रेमी, हृदयसे आदरका पात्र, प्रेमका पात्र न हो तो कौन होगा? प्रियतमका चिह्न ही हृदयमें हर्ष पैदा कर देता है। गोपियाँ श्याम मेघोंको देखकर श्रीकृष्णका स्मरण करती हुई मेघोंका दीर्घजीवन मनाती हैं।^१ भरतजी श्रीरामके पदचिह्न और कुशशय्याके तृणोंको देखकर वहाँकी धूलिको और तृणोंको सिर-माथेपर चढ़ाने लगते हैं,^२ श्रीराम सीताके वस्त्रको हृदयसे लगाते हैं,^३ महामुनि वसिष्ठ^४ और भरतजी^५ गुहको अपने रामका प्रिय सखा समझकर उसपर रामके सदृश स्नेह और प्रेम दिखलाते हैं। सीता-सन्देश सुनानेवाले हनुमान्के प्रति श्रीराम और श्रीरामका आगमनसंवाद सुनानेवाले हनुमान्के प्रति श्रीभरत ऐसी कृतज्ञता प्रकट करते हैं कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता। दोनों ही अपनेको हनुमान्का चिरऋणी घोषित करते हैं—

श्रीरामके वचन—

सुनु कपि तोहि समान उपकारी ।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ॥
प्रति उपकार करौं का तोरा ।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा ॥
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं ।
देखेउँ करि बिचार मन माहीं ॥

श्रीभरतके वचन—

नाहिन	तात	उरिन	में	तोही ।
अब	प्रभु	चरित	सुनावहु	मोही ॥
एहि	संदेस	सरिस	जग	माहीं ।
करि	बिचार	देखेउँ	कछु	नाहीं ॥

भगवान् श्रीकृष्णका सन्देश लेकर जब उद्धवजी ब्रजको पधारे, तब श्रीकृष्णके-से वेषमें देखकर गोपियोंने उन्हें घेर लिया और यह जानकर कि यह भगवान् श्रीकृष्णका सन्देश लेकर आये हैं, गोपियोंके हर्षका पार न रहा—

तं प्रश्रयेणावनताः सुसत्कृतं

सब्रीडहासेक्षणसूनृतादिभिः ।

रहस्यपृच्छन्नुपविष्टमासने

विज्ञाय सन्देशहरं रमापतेः ॥

और उन्होंने विनयावनत होकर प्रेमभरी लज्जापूर्ण दृष्टिसे और मधुर वचनोंसे उनका सत्कार किया।

जबतक भगवान् हमारे परम प्रेमास्पद नहीं हैं, तभीतक उनके स्मरण-चिन्तनका अभ्यास करना है, जिस शुभ घड़ीमें हम अपने-आपको उनके चरणोंपर न्योछावर कर देंगे, मन उनके मनमें मिला देंगे, फिर तो हर घड़ी हमें उन्हींकी प्राणाधिक प्रिय छबि दिखलायी देगी; फिर गोपियोंकी भाँति कविवर 'देव' की भाषामें हम भी यह कह सकेंगे—

जौ न जीमे प्रेम तो कीजै व्रत नेम, जब
कंजमुख भूलै तब संजम बिसेखिये।
आस नहीं पीकी, तब आसन ही बाँधियत,
सासनकै साँसन को मूँद पति पेखिये॥
नखतें सिखालों सब श्याममयी बाम भई
बाहर औ भीतर न दजो देव लेखिये।

१. श्यामघन जीवत रहौ सदाय । तुम्ह देखत घनश्याम हमारे मनमन्दिर प्रगटाय ॥

२. कुस साँथरी निहारि सुहाई। कीन्ह प्रनामु प्रदच्छिन जाई॥
चरन रेख रज आँखिन्ह लाई। बनइ न कहत प्रीति अधिकारी॥

३. पट उर लाइ सोच अति कीन्हा ।

४. रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुठत सनेह समेटा॥
एहि सम निपट नीच कोउ नाहीं। बड बसिष्ठ सम को जग माहीं॥

५. भेंटत भरतु ताहि अति प्रीती । लोग सिहाहिं प्रेम कै रीती ॥

‘...ताहि बोउ तू फूल!’

(पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)

एक संतका पद है—

‘जो तोकूँ काँटा बुवै ताहि बोउ तू फूल!’

बात बहुत छोटी-सी है, पर है बड़ी कठिन। कहा है किसीने—

‘मधु पी लेते सभी मधुप बन,

पर विषपान कठिन कितना है।’

सचमुच, बहुत कठिन है नीलकण्ठ बनना।

पर कठिन लाख हो, हम कोशिश करके नीलकण्ठ बन सकते हैं, जरूर बन सकते हैं।

लीजिये कुछ उदाहरण।

मारनेसे पहले मुझसे काम तो ले लो

‘आखिर तुम चाहते क्या हो?’

‘मुझे मारना है? यह काम तो तुम कभी भी आकर कर सकते हो। पर मुझे मारनेसे पहले मेरे लायक कोई काम हो तो वह मुझसे करा लो; फिर चाहे जब मार डालना। मैं तो रोज सबेरे इसी बगीचेमें मिलता हूँ।’—सिरेमल बापनाने कहा।

इतना सुनना था कि नाथूसिंहके हाथका रिवाल्वर छूटकर धरतीपर जा गिरा।

वह फुक्का फाड़-फाड़कर रोने लगा। उसने पैर पकड़ लिये बापना साहबके।

× × ×

सिरेमल बापनाने अपने जीवनके बयासी वर्षोंमेंसे इकतालीस वर्ष होल्कर, पटियाला, बीकानेर, रतलाम एवं अलवर-जैसी देशी रियासतोंमें प्रधानमन्त्री या गृह मन्त्री-जैसे ऊँचे पदोंपर रहकर बिताये थे।

इन दिनों वे इन्दौरमें थे।

वहींके खडैल गाँवका पटेल था—नाथूसिंह।

भाइयोंसे उसका झगड़ा हुआ। पुलिसने उसे कई फौजदारी मुकदमोंमें फँसा दिया। एकसे छूट न पाता, दूसरेमें पकड़ जाता।

× × ×

अन्तमें निराश होकर नाथूसिंहने सोचा कि पुलिसके चंगुलसे छुटकारा मिलना मुश्किल है तो चलूँ, सारी खुराफातकी जड़ रियासतके दीवानका ही खातमा कर दूँ—‘न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी!’

× × ×

दीवान बापना साहब रोज सबेरे एक घण्टे अपने बगीचेमें जनताकी फरियादेँ सुनते। उनसे जो बनता, करते।

एक दिन नाथूसिंह सब फरियादियोंके पीछे जा खड़ा हुआ। सबके चले जानेपर जब उसकी बारी आयी, तब वह रिवाल्वर तानकर बापना साहबकी ओर बढ़ा।

बापना साहब न डरे, न घबराये, न झिझके।

उन्होंने बड़े प्रेमसे पूछा—‘आखिर तुम चाहते क्या हो? तुम मुझे मारना चाहते हो तो चाहे जब मार डालना। मैं रोज यहाँ मिलता हूँ। पर मुझे मारनेसे पहले, मुझसे जो हो सकता है, वह काम तो मुझसे ले लो!’

× × ×

नाथूसिंहका तना हुआ रिवाल्वर हाथसे छूट गया। रोते-रोते उसने बापना साहबके चरण पकड़ लिये।

बापना साहबने उसे उठाकर गलेसे लगा लिया। अपना रूमाल निकालकर उसके आँसू पोंछे, उसका मुँह पोंछा। फिर कहा—‘तुम्हें जो तकलीफ हो, मुझे सुनाओ।’

नाथूसिंहने अपनी मुसीबतकी सारी कहानी कह सुनायी। उसने बताया कि पुलिस किस तरह झूठे मुकदमे चलाकर उसे सता रही है।

फिर वह बोला—‘मैं अब ऊब उठा हूँ इस जीवनसे।’

बापना साहबने उसे ढाढस बँधाया और कहा—‘तुम सारी बातें लिखकर मुझे दे दो।’

यह घटना है सन् सत्तावनकी। १९५७ की नहीं,
७। MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

साधकोंके प्रति—

[गतिशील संसार]

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः।

अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत॥

(गीता २।१८)

श्रीमद्भगवद्गीता मनुष्यमात्रके अनुभवकी बात कहती है कि प्रत्येक वस्तु और व्यक्ति प्रतिक्षण विनाशकी ओर जा रहे हैं। यदि मनुष्य इस ओर ध्यान दे तो महान् लाभ हो सकता है। शिशुके जन्म लेनेके बादसे लोगोंकी यही दृष्टि रहती है कि यह बड़ा हो रहा है, परंतु गम्भीरतापूर्वक विचार करें तो स्पष्टतः वह प्रतिक्षण छोटा ही होता जा रहा है। मान लीजिये कि किसीकी आयु सौ वर्षकी ही है और अबतक वह एक वर्षका हो चुका तो वास्तवमें अब वह नित्यानबे वर्षका ही है। आज किसी व्यक्तिका देहावसान हो जाता है तो हम कहते हैं कि अमुक व्यक्ति आज मर गया, पर वास्तवमें तो वह प्रतिक्षण मर रहा था, मरते-मरते आज उसका मरना पूरा हो गया—उसके देहका अवसान हो गया।

अभी हम सब लोग यहाँ सत्संगमें आये हुए हैं। जबसे हमलोग अपने स्थानसे चले हैं, तबसे अबतक जो समय बीत गया, उतने कालतक हम सब मर चुके और अभी भी मर रहे हैं, प्रतिक्षण आयु घट रही है। इस प्रकार एक दिन हमारा यह बोलना न बोलनेमें, सुनना न सुननेमें, रहना न रहनेमें एवं जीवित रहना मरनेमें अवश्य बदल जायगा। इसे कोई बड़ा-से-बड़ा वैज्ञानिक भी नहीं रोक सकता। हमलोगोंकी आजतककी अवस्थाएँ—बालकपन, जवानी एवं स्वास्थ्य आदि जो चली गयीं, क्या वे हमें अब वापस मिलेंगी? कदापि नहीं। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु प्रतिक्षण विनाशकी ओर जा रही है। कोई भी ऐसी वस्तु दिखायी नहीं देती, जो स्थिर हो। संत कबीरजीके शब्द हैं—

का माँगूँ कछु थिर न रहाई। देखत नैन चल्यौ जग जाई॥

यह जो कुछ दीखता है, जितना दीखता है, सब प्रतिक्षण बह रहा है—नष्ट हो रहा है। इस जगत्में

केवल 'जाना' मात्र ही सत्य है, अन्य कुछ नहीं। गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी कहते हैं—

देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं। मोह मूल परमारथु नाहीं॥

(रा०च०मा० २।१२।८)

जो संसार प्रतिक्षण नष्ट हो रहा है, उसकी आशा रखना मूर्खता नहीं तो और क्या है? फिर भी हम नयी-नयी आशाएँ रखते हैं। क्या आशा रखनेसे इच्छित वस्तुएँ एवं परिस्थितियाँ प्राप्त हो जायँगी? और यदि प्राप्त हो भी गयीं तो क्या स्थिर रह सकेंगी? यह असम्भव है; क्योंकि स्थिर रहनेका तो उनका स्वभाव ही नहीं है। थोड़ा विचार करें, यदि हमारी वर्तमान परिस्थिति नहीं बदलेगी तो नयी कैसे मिल सकेगी? नयी मिलनेका अर्थ ही है—वर्तमान परिस्थितिका विनाश होना। अतः जिस प्रकार यह नष्ट हो गयी, उसी प्रकार नयी परिस्थितिका भी विनाश अनिवार्य है। इसलिये जो मनुष्य सांसारिक पदार्थोंकी उत्पत्ति, स्थिरता अथवा प्राप्तिकी आशा लगाये रहते हैं, उन लोगोंके लिये भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं कहते हैं—

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।

राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥

(गीता ९।१२)

‘उनकी आशा, उनके कर्म एवं उनका ज्ञान—सब निष्फल है।’

प्रतिक्षण नष्ट होनेवाली वस्तुओंकी आशा कैसी? संसारकी आशा ही परम दुःख और इससे निराश हो जाना ही परम सुख है—

आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम्।

(श्रीमद्भा० ११।८।४४)

जो संसार देखते-देखते ही नष्ट हो रहा है, उसकी ओरसे दृष्टि हटाकर जो रह रहा है और नित्य है, उस परमात्मतत्त्वकी ओर देखना ही यथार्थ दृष्टि है। विचार करना चाहिये, जो प्रतिक्षण नष्ट हो रहा है, वह टिकेगा कैसे? ये शरीर, परिस्थिति, मान-बड़ाई, आदर-सत्कार

विचार नहीं करना है, केवल इस प्रत्यक्ष एवं सन्देह रहित तथ्यको स्वीकारमात्र कर लेना है।

आदर्श कर्मठता

कैसी स्वस्थ मनःस्थिति है। वस्तुतः ऐसी ही मनःस्थिति देश तथा उसकी प्रजाको ऊँचा उठा सकती है। श्रमका जीवनके साथ गहरा सम्बन्ध है। इस प्रजाने श्रम करके जगत्के दूसरे देशोंको बदला दिया कि कैसे टटे-फटे खण्डहरोंको भव्य प्रासादोंमें परिवर्तित किया जा सकता है।

उद्धार और अधोगति

(श्रीबजरजोरसिंहजी)

जीव अज्ञानवश अनादिकालसे इस दुःखमय संसार-सागरमें गोते लगाता रहा है और नाना प्रकारकी भली-बुरी योनियोंमें भटकता हुआ भाँति-भाँतिके भयानक कष्ट सहता रहता है। जीवकी इस दीन दशाको देखकर श्रीभगवान् साधनोपयोगी देवदुर्लभ मनुष्य शरीर देकर एक अवसर देते हैं, जिससे वह चाहे तो साधनाके द्वारा एक ही जन्ममें संसार-समुद्रसे निकलकर परमानन्दस्वरूप परमात्माको प्राप्त कर सकता है। श्रीभगवान्ने श्रीगीताजीमें अपने द्वारा अपना उद्धार करनेकी बात कहकर जीवको यह आश्वासन दिया है कि तुम यह न समझो कि तुम्हारा प्रारब्ध बुरा है, इसलिये तुम्हारी उन्नति होगी ही नहीं। तुम्हारा उत्थान-पतन प्रारब्धके अधीन नहीं है, तुम्हारा उत्थान तुम्हारे ही हाथमें है, साधना करो और अपना उद्धार करो। भगवान् गीता (९।३०) में कहते हैं—

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।

साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥

गीताके पढ़नेवालेका धीरे-धीरे उद्धार होने लगता है, इस बातमें जरा भी सन्देह नहीं करना चाहिये। भगवान् कहते हैं कि केवल सदाचारी और साधारण पापियोंका मेरा भजन करनेसे या मेरी राहमें चलनेसे उद्धार हो जाय तो यह विशेष बात नहीं है। दुराचारी मनुष्य विषयों और पापोंमें आसक्त रहनेके कारण मेरा भजन नहीं करते, पर जब दुराचारीके पूर्वजन्मके शुभ संस्कारोंकी जागृति हो जाती है—शास्त्रोंके अध्ययन या महात्मा पुरुषोंके सत्संगसे दुराचारी मनुष्यकी मुझमें श्रद्धा-भक्ति हो जाती है, वह मेरा भजन, ध्यान और मेरे बताये रास्तेपर चलने लगता है तो उसका उद्धार हो जाता है। श्रीभगवान् सदाचारी और दुराचारीको किस प्रकार मेरा भजन और मेरी सेवा-पूजा करनी चाहिये, इसकी विधि बताते हुए गीतामें कहते हैं—

ममना भव मद्धक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।

मामेवैष्यसि युक्तवैवमात्मानं मत्परायणः॥

(९।३४)

श्रीभगवान् कहते हैं कि मेरेमें ही मनवाला हो जा। सिवाय मेरे दूसरा भाव मनमें न आने पाये। मेरा अनन्य भक्त हो जा, मेरे अनवरत चिन्तनमें लग, मुझे हर समय—मृत्युकालपर्यन्त मेरा ही स्मरण किया कर, श्रद्धासहित मेरा ही निरन्तर पूजन किया कर और मुझे नमस्कार किया कर—इस प्रकार चित्तको मुझमें लगा दे, मेरी शरण होकर आत्माको मुझमें एकीभावसे स्थितकर तू मुझे ही प्राप्त होगा अर्थात् तेरा उद्धार हो जायगा।

श्रीभगवान् गीता (१०।१०) में कहते हैं कि निरन्तर जो मेरे ध्यानमें लगे हैं, उन्हें मैं बुद्धियोग देता हूँ। तत्त्वके यथार्थ ज्ञानका नाम बुद्धि है। उस बुद्धिसे अविवेकजन्य मोहरूपी अन्धकारको मैं विवेक-बुद्धिरूप ज्ञानदीपकद्वारा नष्ट कर देता हूँ। इतना ही नहीं जो मेरी शरणमें रहते हैं, वे मेरी गुणमयी (सत्, रज और तमोमयी) मायासे तर जाते हैं। मायाका काम है, भगवान्के स्वरूपको छिपा देना और अपने स्वरूपको प्रकट करके जीवात्माके स्वरूपमें भोगबुद्धि करा देना, पर जो मुझमें चित्त लगानेवाले होते हैं, वे मेरी कृपासे सभी संकटोंसे पार उतर जाया करते हैं। यथा—

मच्चिन्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि।

अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनश्यसि॥

(गीता १८।५८)

मुझमें चित्तवाला होकर तू मेरी कृपासे मन और इन्द्रियोंपर विजय करके समस्त कठिनाइयोंको अर्थात् जन्ममरणरूप संसारके समस्त कारणोंको मेरे अनुग्रहसे तर जायगा अर्थात् पार उतर जायगा और यदि मेरे कहे हुए वचनोंको अहंकारसे कि 'मैं पण्डित हूँ या बुद्धिमान् हूँ'—ऐसा मानकर जो नहीं सुनेगा या अपनी बुद्धि लगायेगा तो उसका पतन होना निश्चित है और वह अधोगतिको प्राप्त हो जायगा।

मन और इन्द्रियोंसहित जिसने भी शरीर जीता हुआ है, वही अपना मित्र है और जिसके द्वारा मन और इन्द्रियोंसहित

आसक्ति होनेसे ही काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार आदि अनेक अवगुण आते हैं, जो जन्म-जन्मान्तरतक समाप्त नहीं होते। आसक्तिके त्यागसे ही हमारा अन्तःकरण स्वच्छ एवं पवित्र हो सकता है और हम इन बुराइयोंसे मुक्त हो सकते हैं। क्षमा, सरलता, दया, सन्तोष एवं सत्यरूपी अमृतको अन्तःकरणमें भरकर सेवन करनेसे ही हमें अमृतका लाभ मिलेगा और हमारा उद्धार हो जायगा और जिसने उस परमतत्त्वको नहीं जाना, जिसने आत्माका अनुभव नहीं किया, उसे परमात्मा मिल नहीं सकते, न ही वह मुक्त हो सकता है, उसकी इच्छाएँ, आकांक्षाएँ समाप्त नहीं हो सकतीं, उसमें समभाव आ नहीं सकता। ऐसा अज्ञानी अशान्त बुद्धिवाला होता है। वह सभी स्थानोंपर अशान्त रहता है और अधोगतिको प्राप्त होता है।

जय कलिकलुषनिकन्दन राम ॥ टेक ॥

कौसल्यासुखवर्द्धन राम,
जय जानकीहृदयधन! राम ।
द्विजगुरुदेवाराधन राम,
भुक्तिमुक्तिसृतिसाधन राम ॥
सुजनमनःप्रस्यन्दन राम ।
जय कलिकलुषनिकन्दन राम ॥ टेक ॥
त्यक्तराज्यवैभवसुख! राम,
सहजमोदमञ्जुलमुख! राम ।
शरणागतहिताभिमुख! राम,
रागद्वेषपराङ्मुख! राम ॥
रघुकुलमलयजचन्दन! राम ।
जय कलिकलुषनिकन्दन राम ॥ टेक ॥
चित्रकूटविहिताश्रम राम,
दण्डकवनरामनश्रम राम ।
श्रितमायामृगविभ्रम राम
दर्शितचण्डपराक्रम राम ॥
दुष्टदशमुखस्कन्दन राम ।
जय कलिकलुषनिकन्दन राम ॥ टेक ॥

हनुमत्परिपूजितपद	राम,
सेवितसुग्रीवाङ्गद	राम ।
भरतभावनन्दितनद	राम,
लक्ष्मणवात्सल्यप्रद	राम ॥
स्वीकृतशिवविधिवन्दन	राम ।
जय कलिकलुषनिकन्दन	राम ॥ टेक ॥
भवहर भक्तिविभावन	राम,
सरलप्रीत्यनुधावन	राम ।
गुहशबरश्रमणावन	राम,
करुणार्द्र! पतितपावन	राम ॥
शमितार्तजनक्रन्दन	राम ।
जय कलिकलुषनिकन्दन	राम ॥ टेक ॥
ब्रह्माद्वय सुबृहत्तम	राम,
मायाधीश महत्तम	राम ।
महाराज! नृपसत्तम	राम,
मर्यादापुरुषोत्तम	राम ॥
जीवन! हृदयस्पन्दन!	राम ।
जय कलिकलुषनिकन्दन	राम ॥ टेक ॥

जय कलिकलषनिकन्दन राम ॥ टेक ॥

माँकी कृपा

(महात्मा श्रीश्रीसीतारामदास ॐकारनाथजी महाराज)

(१)

हरिचरणका नाम हरिचरण होनेपर भी लोग उसे दुर्गादास कहते थे। इसका अवश्य ही कोई कारण था। उसने जब दीक्षा ली, तब उसके गुरुदेवने कहा कि 'बेटा! 'दुर्गा-दुर्गा' जपना।'

दुर्गा दुर्गेति दुर्गेति दुर्गानाम परं मनुः।
यो जपेत् सततं चण्डि जीवन्मुक्तः स मानवः॥
'चण्डिके! 'दुर्गा-दुर्गा-दुर्गा' नाम ही परम मन्त्र है। जो मनुष्य इस नामका निरन्तर जाप करता है, वह जीवन्मुक्त है।' श्रीगुरुदेवके मुखसे यह सुननेके बाद हरिचरणने 'दुर्गा-दुर्गा' बोलना प्रारम्भ किया। हरिचरण प्रातःकाल 'दुर्गा-दुर्गा' कहता हुआ उठता, अविрам 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता स्नान करता और पूजाके अन्तमें 'दुर्गा-दुर्गा' उच्चारण करता हुआ शंखकी पोटली कन्धेपर रखकर बाहर निकल जाता।

हरिचरण जातिका शंखारी था। वह शंख (चूड़ियाँ) बेचकर जीविका चलाता था। इस प्रकार कुछ दिन 'दुर्गा-दुर्गा' बोलनेपर सब लोग उसको सामने दुर्गादास और पीछे दुर्गापागल कहने लगे। हरिचरण उनकी बातें न सुनकर अपने रंगमें 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता रहता। वह दिनभर 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता हुआ शंख बेचता फिरता। सन्ध्या हो जानेपर थका-माँदा घर लौटता और खा-पीकर 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता हुआ सो जाता। उसकी ऐसी अवस्था हो गयी कि सोते रहनेपर भी उसकी जिह्वा जप करती रहती थी।

उसकी ऐसी दशा देखकर कामिनी-कांचनके क्रीतदास, भोगविष्टाके कृमि पड़ोसियोंने निश्चय किया कि उसका मस्तिष्क विकृत हो गया है, नहीं तो वह दिन-रात 'दुर्गा-दुर्गा' क्यों करता? जब रोग-शोक, सुख-दुःख—सब समय हँसते-हँसते 'दुर्गा-दुर्गा' कहता है तो फिर पागल हो ही जायगा। जो वयस्क थे, वे

दुर्गादास कहकर हँसी उड़ाते और दुष्ट लड़के दल बाँधकर बोलते—

दुर्गा वले दूगो खेपा शाँखा नये जाय।
दुर्गा तार पिछू पिछू घुरिया बेड़ाय॥
'दुर्गा, बोलता हुआ एक पागल शंख (चूड़ियाँ) लेकर घूमता है और दुर्गा उसके पीछे-पीछे घूमती है।'

यह सुनकर हरिचरणका शरीर रोमांचित हो उठता, वह पीछे घूमकर देखने लगता कि सचमुच उसके पीछे दुर्गाजी हैं या नहीं! तब बच्चे ताली बजा-बजाकर हँस उठते और उसके ऊपर धूल फेंकने लगते। यह सब सहन करता हुआ वह शंखकी पोटली कन्धेपर रखकर 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता आगे बढ़ जाता। अस्तु, अविрам 'दुर्गा' नाम-जपके कारण उसके माता-पिताका दिया हुआ हरिचरण नाम लुप्त हो गया। जनतामें वह दुर्गादासके नामसे प्रसिद्ध हो गया, इसमें उसको कोई दुःख न था।

(२)

वैशाखका महीना था। दोपहरकी वेला, धूप धाँय-धाँय कर रही थी। दुर्गादास शंखकी पोटली कन्धेपर लेकर 'दुर्गा-दुर्गा' बोलता हुआ तारिजीपुरकी सीमाके आगे मैदानमें जा पहुँचा।

कुछ दूर जानेके बाद मैदानके बीचमें एक पोखरा पड़ा। दुर्गादास पोखरा पार कर गया। इतनेमें उसके कानमें एक आवाज आयी—'अरे लड़के! मुझे शंख देगा?' दुर्गादासने ऐसी मीठी आवाज कभी सुनी न थी। उसने पीछे मुड़कर देखा, एक स्त्री जलमें खड़ी पैर बढ़ाते हुए उसे बुला रही है। वह पीछे घूमकर अवाक् देखता रह गया। बहुत बड़े-बड़े लोगोंके घर शंख पहनाया, किंतु ऐसा रूप उसने कहीं भी न देखा था! वह बोला—'क्यों नहीं दूँगा, माँ!'

वह एक सघन पेड़के नीचे बैठ गया। धीरे-धीरे

देवीको भोग लगाया गया। वे बोले—‘माँ शिवरामके लिये प्रसाद भेजा है। हम तो उपवास ही करेंगे।’ ऐसा

दुर्गादास बोला—‘आप ऐसी ही बात कहेंगे, यह उन्होंने पहले ही कह दिया है; मझसे उन्होंने कह दिया

धीरे-धीरे पोखरीके काले जलका भेदन करके शंख पहने लाल-लाल दो सुन्दर हाथ बाहर निकले। 'वही माँ है! वही माँ है!!'—कहते-कहते दोनों व्यक्ति मूर्च्छित होकर गिर पड़े!

कश्मीर-प्रदेशके शक्तिपीठ

(पं० श्रीजानकीनाथजी कौल 'कमल', एम० ए०, बी० टी०, प्रभाकर)

नीलमतके अनुसार पर्वतराज हिमालयके उत्तर-पश्चिम भागमें लक्ष्मीका प्रदेश (कश्यपपीठ) कश्मीर प्रकृतिकी सुरम्यस्थली है। यह भारतवर्षमें ही नहीं, संसारभरमें अपनी रमणीयताके लिये विशेष प्रसिद्ध है। शक्ति-उपासनाके आधाररूपमें यह प्रदेश अति प्राचीनकालसे विशेष आदर पाता रहा है। रुद्रयामल-तन्त्रमें कहा है— 'शैवीमुखमिहोच्यते' अर्थात् शक्ति-शिवके साक्षात्कारका यह प्रवेशद्वार है।

'नीलमत-पुराण' इसका स्थलपुराण है। तदनुसार यहाँ भगवती शारदा, भगवती राजराजेश्वरी लक्ष्मी (श्रीनगर) महारानी, भगवती शारिका, भगवती ज्वालाके रूपमें शक्ति-उपासना की जाती रही है। कहते हैं कि आद्यशंकराचार्यको यहाँके 'शारदा-पीठ' (जो अब पाकिस्तान-अधिकृत कश्मीरमें है) से ही 'जगद्गुरु' की महान् उपाधि प्राप्त हुई थी। भारतके प्रसिद्ध ५१ शक्ति-महापीठोंमेंसे यहाँ श्रीनगरमें सतीके अंग तथा अङ्गभूषण-कण्ठप्रदेशकी पूजा होती है। शक्तिका नाम 'महामाया' है और भैरव 'त्रिसन्ध्येश्वर' हैं। कश्मीरके कतिपय अन्य शक्तिपीठोंका परिचय इस प्रकार है—

राजराजेश्वरी श्रीमहाराज्ञी

यह तीर्थस्थान श्रीनगरसे २८ कि०मी० दूर तूलमूल ग्राममें है। यहाँ षट्कोण तथा ओंकारके आकारका अमृतकुण्ड (चश्मा या नाग) है, जिसके मध्य महाराज्ञीका मूर्ति-विग्रह संगमरमरके सुन्दर मन्दिरमें स्थापित है। इस सुन्दर भूमि-भागमें चारों ओर सिन्धुनदीका नाला बहता है। भगवतीके ध्यानका इस प्रकार वर्णन किया गया है—

या द्वादशार्कपरिमण्डितमूर्तिरिका
सिंहासनस्थितिगता ह्युरगैर्वृता च।
देवीमतक्यगतिमीश्वरतां प्रपन्नां
तां नौमि भर्गवपुष्पीं परमार्थराज्ञीम्॥^१
चक्रेश्वरी श्रीशारिका



ये द्वारि-पर्वतके मध्य विराजमान हैं। इसे 'शारिकाशैल' भी कहते हैं। कहा जाता है कि भगवतीने सारिकाका रूप धारणकर अपनी चोंचसे कण-कण डालकर इसे बनाया। 'सारिका' से ही 'शारिका' बन गया। 'ध्यानरत्नमाला' में देवीका ध्यान इस प्रकार वर्णित है—

बीजैः सप्तभिरुज्ज्वलाकृतिरसौ या सप्तसप्तिद्युतिः

सप्तर्षिप्रणताङ्घ्रिपङ्कजयुगा या सप्तलोकार्तिहत्।

कश्मीरप्रवेशमध्यनगरे प्रद्युम्नपीठे स्थिता

देवीसप्तकसंयुता भगवती श्रीशारिका पातु नः॥^२

द्वारि-पर्वतके स्थान-स्थानपर देवी-देवताओंके निर्देश

हैं। यहाँ त्रिकोटि देवताओंका वास है। भक्तजन नित्यप्रति

१. इस श्लोकका तात्पर्य इस प्रकार है—जिन भगवतीका श्रीविग्रह द्वादश आदित्योंकी प्रभासे विद्योतित है, जो अनुपमेय हैं, सिंहके आसनपर विराजमान हैं, सर्पोंसे सेवित हैं, अचिन्त्य सामर्थ्यशालिनी तथा परमेश्वर्यमें अधिष्ठित हैं, उन तेजोमयी एवं परमार्थकी अधिष्ठात्री श्रीराजराजेश्वरी देवीको प्रणाम करता हूँ।

२. इस श्लोकका तात्पर्य इस प्रकार है—सप्तबीजोंके द्वारा जिनकी आकृति सदा उज्ज्वल बनी रहती है एवं जिनकी प्रभा सूर्यके समान है। जिनके कमलकी तरह सुन्दर युगल चरणोंमें सदा सप्तर्षिप्रणत रहते हैं। जो सप्तों लोकोंका दुःख मटा करणी हैं, जो अत्युत्तम कश्मीर मण्डलकी मध्यनगरीके प्रद्युम्नपीठपर विराजमान रहती हैं। सौत देवियोंके साथ सदा रहनेवाली वे भगवती श्रीशारिकाजी हम सभीको रक्षा कर।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

विशेषकर प्रातःकाल इस श्रेष्ठ पर्वतकी परिक्रमा करते 'नीलमतपुराण' के अनुसार और भी कई मन्दिर हैं, जो हैं, जो लगभग चार किलोमीटर है।

ऊपर कहे दोनों तीर्थस्थानोंमें रुद्रयामलतन्त्रान्तर्गत भवानीनामसहस्रस्तवराज तथा कालिदासकृत ‘पञ्चस्तवी’ (जिसमें लघुस्तव, चर्चास्तव, घटस्तव, अम्बास्तव और सकलजननीस्तव—ये पाँच स्तव हैं।)—का पाठ किया जाता है। आद्यशंकराचार्यकृत ‘सौन्दर्यलहरी’ का भी यहाँ अधिक प्रचार रहा है। ये ग्रन्थ षट्चक्र-रहस्य और श्रीचक्र-विश्लेषणमें उत्तम माने जाते हैं, फिर भी यहाँके साधारण जनमें भवानीनामसहस्रशक्ति-उपासनाका विशेष माध्यम रहा है। इस स्तवराजका पाठ और जप प्राचीन कालसे होता चला आ रहा है। यह इसकी बहुसंख्यक प्राचीन प्राप्त हस्तलिपियोंसे ज्ञात होता है।

श्रीसाहिब कौल शक्ति-साधनाके विशेष आचार्य
हुए हैं। जिन्होंने ‘भवानीसहस्रनाम’ पर ‘देवीनामविलास’
नामसे विशद व्याख्या लिखी है।

શ્રીજ્વાલાજી

इनका विशाल मन्दिर श्रीनगरसे १८ किलोमीटर दूर खिब गाँवमें पर्वत-खण्डपर स्थित है। यहाँ आषाढ़ शुक्ल चतुर्दशीको एक बड़ा मेला लगता है। भक्तजन पर्वतपादमें स्थित जल-कुण्डमें स्नान-तर्पण और अर्चन-ध्यानकर पत्थर-निर्मित सीढ़ियोंसे ऊपर जाकर ज्वाला देवीजीका दर्शन-पूजन करते हैं।

कुलवागीश्वरी

श्रीनगरसे लगभग ६० कि०मी० दूर अनन्तनागके प्रान्तमें कुलगामके स्थानपर देवीके कुण्ड तथा मन्दिर हैं ।



कश्मीरी-पण्डितजनोंकी अधिष्ठात्री देवियाँ हैं। विशेष गृहस्थोंके साथ विशेष देवियाँ जुड़ी हैं। इनके अतिरिक्त बहुत-से और शक्ति-स्थान कश्मीरमें विद्यमान हैं। उनका वर्णन स्थानाभावके कारण यहाँ नहीं दिया जा सका है।

क्षीरभवानी योगमाया

कश्मीरकी राजधानी श्रीनगरसे पन्द्रह मील उत्तर 'गन्धर्व'—स्थान है। इसके पास ही क्षीरभवानी योगमायाका मन्दिर है। चारों ओर जल और बीचमें एक टापू है। इस स्थानकी शोभा अत्यन्त सुरम्य है। चिनारोंके वृक्षोंकी पंक्ति और मन्दिरकी पवित्रता तथा प्राकृतिक सुन्दरता भावुक धार्मिक पर्यटकोंकी दृष्टि सहज ही आकृष्ट कर लेती है। ज्येष्ठ शुक्ल अष्टमीको यहाँ एक बड़ा मेला लगता है। प्रायः वैदिक विधिसे यहाँ साधना करनेकी परम्परा है। क्षीरभवानीके मण्डपके चारों ओर कुण्ड—जलके रंग—परिवर्तनपर श्रद्धालु शुभाशुभका विचार करते हैं।

माता सारिका देवी

खड्ग परशु, खट्वांग, गदा, अंकुश, त्रिशूल वर।
डमरु, पाश, पुस्तक, तोमर, मूसल, शुभ मुग्दर॥
चक्र, बाण, शुचि धनुष, अभय-वर-मुद्रा धारण।
नर-कपाल अष्टादशभुज शशि-शिर शुभ कारण॥
शोभित आभूषण-वसन अङ्ग-अङ्ग अति ह्युति बिमल।
सकल समङ्गल-मूल मृदु मातृ सारिका-पद-कमल॥

[पद-रत्नाकर]

कैसे बनें भगवान्‌के प्रेमी भक्त ?

(डॉ० श्रीभीकमचन्द्रजी प्रजापति)

महिमा—भगवान्‌को सबसे ज्यादा प्यारा लगता है—उनका अपना प्रेमी भक्त। श्रीमद्भागवतमें भगवान्‌की वाणी है—

न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः।

न च सङ्कर्षणो न श्रीनैवात्मा च यथा भवान्॥

(११।१४।१५)

अर्थात् हे उद्धव! मुझे तुम—जैसे प्रेमी भक्त जितने प्रियतम हैं, उतने प्रिय मेरे पुत्र ब्रह्मा, आत्मा शङ्कर, सगे भाई बलरामजी, स्वयं अर्धाङ्गिनी लक्ष्मीजी और मेरा अपना आत्मा भी नहीं है।

न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव।

न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥

(११।१४।२०)

अर्थात् हे उद्धव! योग—साधन, ज्ञान—विज्ञान, धर्मानुष्ठान, जप—पाठ और तप—त्याग मुझे प्राप्त करानेमें उतने समर्थ नहीं हैं, जितनी दिनों दिन बढ़नेवाली अनन्य प्रेममयी मेरी भक्ति।

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयाऽऽत्मा प्रियः सताम्।

भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात्॥

(११।१४।२१)

अर्थात् मैं सन्तोंका प्रियतम आत्मा हूँ। मैं अनन्य श्रद्धा और अनन्य प्रेमसे ही पकड़में आता हूँ। मुझे प्राप्त करनेका यह एक ही उपाय है। मेरी अनन्य भक्ति उन लोगोंको भी पवित्र—जातिदोषसे मुक्त कर देती है, जो जन्मसे ही चाण्डाल हैं।

श्रीरामचरितमानसमें भगवान्‌की वाणी है—

भगतिवन्त अति नीचउ प्राणी। मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी॥

(७।८६।१०)

अर्थात् भक्तिमान् अत्यन्त नीच भी प्राणी मुझे प्राणोंके समान प्रिय है, यह मेरी घोषणा है।

गुणों एवं सुखका महत्त्व नहीं—आपके पास

स्वस्थ शरीर एवं सबल इन्द्रियोंका सुख है; सेवाभावी

पत्नी, पति, संतान आदि परिवारजनोंका सुख है; धन, सम्पत्ति, विशाल भवन, जेवर, आभूषण, कारों—गाड़ियों मान—सम्मान, यश—प्रतिष्ठा आदिका सुख है; आपके व्यक्तित्वमें अनेक गुण हैं—आप बहुत विद्वान् हैं, बहुत पढ़े—लिखे हैं, बहुत बलवान् हैं, शक्तिशाली हैं, बहुत उच्च पदपर कार्यरत हैं, आदि आदि, लेकिन यदि आपके जीवनमें भक्ति नहीं है तो इन सबका कोई खास महत्त्व नहीं है। श्रीरामचरितमानसमें भगवान् श्रीरामकी वाणी है—
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता॥
जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई॥
भगति हीन नर सोहड़ कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा॥

(३।३५।४—६)

अर्थात् श्रीरघुनाथजीने (शबरी)—से कहा—हे भामिनि! मेरी बात सुनो! मैं तो केवल एक भक्तिका ही सम्बन्ध मानता हूँ। जाति, पाँति, कुल, धर्म, बड़ाई, धन, बल, कुटुम्ब, गुण और चतुरता—इन सबके होनेपर भी भक्तिसे रहित मनुष्य कैसा लगता है, जैसे जलहीन बादल (शोभाहीन) दिखायी पड़ता है।

भगति हीन बिरंचि किन होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई॥

(७।८६।९)

अर्थात् भक्तिहीन ब्रह्मा ही क्यों न हो, वह मुझे सब जीवोंके समान ही प्रिय है।

सब सुख खानि भगति तैं मागी। नहिं जग कोउ तोहि सम बड़भागी॥
जो मुनि कोटि जतन नहिं लहहीं। जे जप जोग अनल तन दहहीं॥
रीझेउँ देखि तोरि चतुराई। मागेहु भगति मोहि अति भाई॥
सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरें। सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरें॥
भगति ग्यान बिग्यान बिरागा। जोग चरित्र रहस्य बिभागा॥
जानब तैं सबही कर भेदा। मम प्रसाद नहिं साधन खेदा॥

माया संभव भ्रम सब अब न ब्यापिहहिं तोहि।

जानेसु ब्रह्म अनादि अज अगुन गुनाकर मोहि॥

(७।८५क।३—८, ८५क)

अर्थात् तूने सब सुखोंकी खान भक्ति माँग ली।

श्रीरामकथाका एक
पावन-प्रसंग—

प्रभो! आपको कैसे प्रसन्न करें ?

[श्रीराम-हनुमान्-संवाद]

(आचार्य श्रीरामरंगजी)

श्रीवसिष्ठाश्रमसे लौटकर श्रीराम राजभवन आ गये। उनके संकेतपर हनुमान् भी कनकभवनमें आ गये। जनकनन्दिनी जानकी भी उनके समीप आकर बैठ गयीं। आज श्रीरामके नेत्रोंसे प्रसन्नता फूटी पड़ रही थी। उन्हें अत्यन्त प्रहर्षित अनुभव करते हुए जानकी धीरेसे बोलीं, 'लगता है आज हमारे स्वामीको कुछ विशेष उपलब्धि— किसी भुवनके धनाध्यक्षकी नवनिधि ही प्राप्त हो गयी ?'

‘वैदेहि ! इससे भी अधिक, यह मानिये कि समस्त भुवनोंके धनाध्यक्षोंकी नवाधिक निधियोंसे भी अधिकाधिक ही प्राप्त करते हुए हम यहाँ आये हैं।’

‘ऐसा क्या यदि...’

‘हाँ, तुम भी सुनोगी तो यही कहोगी’

‘तो सुनाइये न’

‘आज हमें अपने मारुतिका, हमारे प्रति क्या भाव है, उससे हम परिचित हो गये।’ कहते हुए श्रीरामने वसिष्ठाश्रमके प्रसंगका समस्त वर्णन कर डाला। सीता सुनकर बोलीं, ‘हम कुछ-कुछ तो जानती थीं। शेष आपसे सुनकर कुछ और भी जान गयीं। किंतु आप क्षमा करें, जो आप बता रहे हैं, वह इन पवनात्मजको देखते हुए अपूर्ण ही है।’

जनकनन्दिनीके शब्द सुनकर श्रीराम उनकी ओर गम्भीरतापूर्वक देखते हुए बोले—

‘प्राणवल्लभे! तुम सत्य कहती हो। मारुति क्या हैं, उन्हें त्रैलोक्यभरमें वस्तुतः कोई न जानता है और न ही जान सकता है। यदि कोई कहे कि ‘मैं मारुतिको जानता हूँ तो उसे आत्मप्रवचक (स्वयं ही स्वयंको छलनेवाला) कहनेके अतिरिक्त तो हमारे पास कोई अन्य शब्द नहीं है।’

श्रीराम अभी कुछ और भी कहते कि उससे पूर्व ही मारुति बोल उठे—‘प्रभो! यह बताइये कि आपको कैसे प्रसन्न किया जाय?’

‘मारुति! यह तुम क्या प्रश्न कर रहे हो? यह राम तुमसे स्वप्नमें भी अप्रसन्न नहीं हो सकता।’

‘प्रभो! मैं यह मारुति, जो आपका दासानुदास है, केवल उसके विषयमें नहीं अपितु जीव-जगत्के प्रत्येक जीवके कल्याणके निमित्त ही यह प्रश्न कर रहा हूँ। महाराजा दशरथके पुत्र परब्रह्म परमेश्वरसे यह प्रश्न कर रहा हूँ।’

‘समझे-समझे, ये पूजा-पाठ—अनेक पदार्थोंके समर्पण—तीर्थ—व्रतकी अपेक्षा ‘मैं आपको प्रणाम करता हूँ’ हमारी प्रसन्नताके लिये मुखसे इतना कहना ही पर्याप्त है।’

‘किंतु स्वामिन्! यदि मुखमें कोई पदार्थ अथवा ताम्बूल हो तो?’

‘तो हमारा ध्यान करते हुए हाथ जोड़ दे।’

‘हाथोंमें भी कुछ हो तो?’

‘मस्तक झुका दे।’

‘मस्तकपर भी कुछ भार रखा हुआ हो तो?’

‘हनुमंत! हम समझ गये। तुम जगज्जीवोंके कल्याणके निमित्त आज एक कटिबद्ध योद्धाकी भूमिकामें उपस्थित हो। तो हम भी तुम्हें उत्तर-पर-उत्तर देनेके लिये प्रस्तुत हैं। अन्तिम उत्तर, बाह्य रूपसे यही है कि केवल पलकें झुकाकर प्रणाम कर ले। पलकोंसे प्रणाम करनेवालेका मैं जन्म-जन्मके लिये ऋणी हो जाता हूँ।’ उसकी निरन्तर परिक्रमा करने लगता हूँ कि यह मुझसे कुछ तो कहे। ताकि मैं उसकी यथासम्भव पूर्ति करते हुए उससे ऋण-मुक्त हो सकूँ क्या, अपितु स्वयंको धन्यातिधन्य अनुभव कर सकूँ।

‘जहाँतक अन्तरका सम्बन्ध है तो मुझसे अधिक
तुम्हारा अन्तर इस तत्त्वको जानता है।’

मारुति जनकनन्दिनीकी ओर देखते हुए बोले, 'जगदम्बिके! इतने सहजमें प्रसन्न होनेवाले ठाकुरके स्थानपर जो कठिन तपस्याएँ कर-करके, किन्हीं-किन्हींसे दुर्लभातिदुर्लभ वर पाकर, अहमाश्रित होकर सर्वनाशका वरण करते हैं, उन्हें क्या कहा जाय?'

आयुर्वेदिक चिकित्सकोंने डेंगू बुखारकी जटिल एवं व्ययसाध्य उपचार-व्यवस्थासे निजात दिलाते हुए डेंगूके इलाजका जो आसान, सस्ता और अत्यन्त कारगर चिकित्सा-विकल्प प्रदान किया है, वह इस प्रकार है—डेंगूके मरीजका आयुर्वेदिक चिकित्सक अमृता (गिलोय), घृतकुमारी पपीतेकी पत्ती और कालमेघ-जैसी जड़ी-बूटियोंसे अत्यन्त सफलतापूर्वक उपचार कर रहे हैं। इसके उपचारार्थ ताजे गिलोयकी डण्डी, पपीतेकी पत्ती और कालमेघके पत्तोंसे बना काढ़ा और घृतकुमारीका रस या गूदा दिनमें चार बार देना चाहिये। ये चारों औषधीय वनस्पतियाँ सर्वत्र आसानीसे मिल जाती हैं। इनमेंसे गिलोय तथा कालमेघकी गोलियाँ और घृतकुमारीका तैयार रस भी बाजारमें आसानीसे पर्याप्त मात्रामें मिल जाता है और पपीतेकी प्राप्ति भी अत्यन्त सुगम है। उपर्युक्त औषधियोंको डेंगूके मरीजको देनेके अलावा उसे कम-से-कम चार-छः लीटर पानी दिनभरमें देना जरूरी रहता है। पानी उबालकर किसी बर्तनमें एक साथ रख लेना चाहिये और उसे मरीजको थोड़े-थोड़े अन्तरालपर देते रहना चाहिये। इस जलमें थोड़ी मात्रामें ग्लूकोज मिलानेसे रोगीको अतिरिक्त शक्ति मिलती है। डेंगूके रोगीको सुपाच्य और ताजा भोजन दिया जाना चाहिये। मरीजको आसानीसे हजम होनेवाले फल और पोषक तत्त्व भी देना चाहिये। पपीतेके फलकी सब्जी, उबला पपीता, पपीतेका पका फल इस बीमारीमें विशेष उपयोगी है। डेंगूके ज्वरसे मुक्ति पा लेनेके बाद लीवरपर पड़े इसके प्रभावके निराकरणके लिये तीन माहतक कालमेघ लेते रहना चाहिये तथा पपीतेके फलका नियमित सेवन करना चाहिये। मिर्च-मसाले, चिकनी चीजें और तेल, घी कम-से-कम लेना चाहिये। इससे रोगीका लीवर स्वस्थ हो जाता है।

(श्रीरामलालजी)



रामदास काठियाबाबाके स्मरणमात्रसे एक ऐसे संतका चित्र अपने सम्मुख अभिव्यक्त हो उठता है, जिनकी सघन भूरी-भूरी जटाएँ हैं, शरीर अम्बरहीन तथा भस्मलेपसे विभूषित है, वक्षःस्थलतक लम्बी दाढ़ी फहरा रही है और कमरमें जंजीरसे बँधी हुई काठकी लंगोटी तथा हाथमें विशाल कमण्डलु शोभा पा रहा है। काठियाबाबा साधना, तपस्या, संयम-नियम, वैराग्य और जीवमात्रके प्रति दयाकी तो मानो साक्षात् मूर्ति ही थे। वे एक सच्चे संन्यासी थे। उनका जीवन संतोंके प्रति असाधारण अनुराग और सेवाका अद्भुत सम्मिश्रण था। वे विक्रमीय सम्वत् १९१४ (सन् १८५७ ई०)-के प्रथम स्वाधीनता-संग्रामके समय उपस्थित थे। उस समय भी उनकी अवस्थाका अनुमान लगाना कठिन था।

पंजाब प्रदेशके अमृतसर जनपदमें लोनाचमारी ग्रामके सन्निकट एक ग्राममें रामदास काठियाबाबाने सम्बत् १८०३ वि० के लगभग जन्म लिया था। उनके पिता बड़े सदाचारी और भगवन्निष्ठ ब्राह्मण थे। उनका स्वभाव अत्यन्त धार्मिक था।

उस गाँवमें एक परमहंसजी रहते थे। वे एक पेड़के नीचे बैठकर भगवानका भजन करते थे। काठियावाड़

उस समय केवल चार वर्षके थे। वे खेलते-खेलते परमहंसजीके पास पहुँच गये। परमहंसजीने बड़े ध्यानसे उनकी ओर देखकर कहा—‘राम-नामका जप करो। रामका नाम लेनेसे मनुष्य बड़ा बनता है। राम-नामसे सुख और शान्तिकी प्राप्ति होती है।’ परमहंसजीके कथनका चार वर्षके बालकपर अमिट प्रभाव पड़ा। वे उनके कथनके अनुसार एकान्तमें बैठकर नित्य रामनामका जप करने लगे।

माता-पिताको संतानकी भक्तिमयी रुचिपर बड़ा संतोष हुआ। इनमें बचपनसे ही साधु-संतोंके प्रति अनुरागका भाव जाग्रत् होने लगा। सात वर्षकी अवस्थातक वे भैंस चराया करते थे। तबतक उनका उपनयन-संस्कार नहीं हुआ था।

एक दिन भैंस चराते समय उन्हें एक महात्माके दर्शन हुए। महात्मा बहुत भूखे थे। उन्होंने काठियाबाबासे कुछ खानेके लिये माँगा। वे दौड़कर घर गये और आटा, घी आदि लाकर उन महात्माजीकी सेवामें अर्पित कर दिया। महात्माने उन्हें आशीर्वाद दिया कि 'एक दिन तुम बहुत बड़े योगी होओगे और जीवमात्रको सन्मार्गपर लगाओगे।'।

उपनयन-संस्कार हो जानेपर पिताने उनको ग्रामसे थोड़ी ही दूरपर एक विद्यालयमें अध्ययन करनेके लिये भेजा। काठियाबाबा अध्ययनकालमें भी राम-नामकी जप-संख्या बढ़ाते गये। उनमें वैराग्यका उदय होने लगा। अठारह वर्षकी अवस्थामें शिक्षा पूरी करके घर लौटनेपर माता-पिताने उनके विवाहका विचार किया। काठियाबाबाने विनम्रता और सरलतापूर्वक उनसे प्रार्थना की कि 'वैवाहिक जीवनमें मेरा मन तनिक भी नहीं लगेगा; क्योंकि मुझे राम-नामके जपमें जो रस मिलता है, उसकी प्राप्ति भोगोंमें कभी भी सम्भव नहीं है।'
 arma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shr
 विवाहका प्रस्ताव टल गया। काठियाबाबाकी अधिकश

युवती कुल-वधू कभी-कभी अकेली उनका दर्शन करने आया करती थी। महाराजने उसे आनेसे मना किया, पर वह किसी भी तरह न मानती थी। अचानक ही महाराज गाँवसे चले गये और फिर कभी वहाँ न आये। वे संयम-नियमके बड़े कट्टर थे। वे कहा करते थे—‘भगवान् सदा छायाकी तरह साथ रहकर अपने भक्तोंकी रक्षा करते हैं।’

वे पुनः अपने गुरुदेवके सन्निकट गये और उन्हींकी शरणमें रहकर तप करने लगे। वे इस बातपर दृढ़ विश्वास करते थे कि सद्गुरुकी कृपासे मुक्ति अवश्य ही प्राप्त हो सकती है। वे अपने गुरुके चरणदेशमें अप्रतिम श्रद्धा रखते थे। एक बार उनके गुरुदेव उत्तराखण्डमें तप कर रहे थे। वे कुटीके भीतर थे और काठियाबाबा बाहर धूनी ताप रहे थे। रातमें बर्फ गिरनेसे धूनीकी आग ठण्डी हो गयी। काठियाबाबाने कुटीके भीतर जाकर गुरुके तप, मानसिक शान्ति तथा एकान्त साधनामें विघ्न नहीं उपस्थित करना चाहा, वे कुटीके सामने ही पड़े रहे। रातकी नीरवता और भयानक शीतकालमें भी वे विचलित न हुए। उनका शरीर ठण्डकसे काँप रहा था। जब गुरुदेव बाहर आये तो उनकी निष्ठा देखकर बहुत प्रसन्न हुए। तत्पश्चात् वे धूनी जलानेके लिये अन्दरसे आग लेकर सहज शान्तिकी मुद्रामें पुनः अपने स्थानपर आकर पूर्ववत् भजनमें तत्पर हो गये।

एक दिन गुरुदेवने आदेश दिया कि 'मैं एक स्थानपर जा रहा हूँ। मैं जबतक लौट न आऊँ, तुम इसी आसनपर बैठे रहना, कहीं अन्यत्र मत जाना।' दैवयोगसे महात्मा देवदास आठ दिनके बाद लौट सके। काठियाबाबाको उसी आसनपर अडिग देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए और बोले—'तुम्हें इस निष्ठाके फलस्वरूप किसी-न-किसी दिन इसी जीवनमें भगवान्‌का साक्षात्कार प्राप्त होगा।''

वे अपने गुरुके आदेशसे द्वारका गये। द्वारकासे

सम्बत् १९१४ वि० की बात है। भारतीय स्वाधीनताके प्रथम संग्रामका समय था। काठियाबाब यमुनाके तटपर विचरण करते हुए आगरा जा रहे थे। गोरे सिपाहियोंने समझा कि कोई विद्रोही वेष बदलकर भाग रहा है। उन्होंने दो बार गोली चलायी, किंतु महाराज बच गये। तीसरी बार गोली चलाते समय बन्दूक हाथसे नीचे गिर पड़ी। तब सिपाहियोंने उनकी महत्ता समझी और चरण-धूलि ली। महाराज अपने विचरणमें मस्त थे। इस घटनाका उनके मनपर कुछ भी प्रभाव न पडा।

एक बार उन्होंने पंचाग्नि तापनेकी इच्छा प्रकट की। एक साधुने ईर्ष्यावश उनके चारों ओर हजार कण्डे जला दिये। लोग घबरा गये कि न जाने इस पंचाग्निका क्या परिणाम होगा! काठियाबाबा पंचाग्नि-तपकी इस कठिन परीक्षामें भी अविचल रहे। उनका बाल भी बाँका न हो सका।

काठियाबाबाका जीवन तपस्या-प्रधान था। वे कहा करते थे—‘रातके चौथे प्रहरसे ही निद्राका परित्यागकर भगवान्‌का भजन करना चाहिये। निन्दा और स्तुतिसे परे रहकर सत्कर्ममें लगे रहना चाहिये।’ गुरुकी शरणागतिपर काठियाबाबा बड़ा जोर देते थे। कहा करते थे कि ‘गुरुके चरणाश्रयसे अन्तःकरण शुद्ध होता है, माया और अविद्याके अन्धकारका नाश और भगवत्प्रकाशका उदय होता है।’ सद्गुरुकी कृपामें विश्वास ही उनकी साधनाका स्वरूप था। तपको उन्होंने साधनाके क्षेत्रमें बड़ा महत्त्व दिया है। यह उनका दृढ़ सिद्धान्त था कि भगवान्‌का भजन ही जीवनका श्रेय है।

भरतपुरके सैलानी-कुण्डपर कुछ दिनोंतक तप करनेके बाद वे वृन्दावनमें निवासकर भगवान्का भजन करने लगे। साधु-महात्माओंकी सेवामें उनको बड़ा रस मिलता था। अतः वे दावानल-कुण्डपर रहकर तपोमयी साधनामें लग गये। नित्य जंगलसे तीन-चार मन लकड़ी काट लाते थे और उसका बड़ी निःस्पृहतासे सन्तोंकी सेवामें उपयोग करते थे। वे यमुनाके तटपर एकान्त स्थानमें आसन लगाकर भजन करनेमें परमानन्दका अनुभव करते थे। बंगालके प्रसिद्ध महात्मा विजयकृष्ण गोस्वामी अपने वृन्दावन-निवास-कालमें कभी-कभी इनके सत्संग और दर्शनके लिये आते रहते थे। वृन्दावनके संत-महात्माओंमें काठियाबाबा 'ब्रजविदेही' नामसे प्रसिद्ध थे। सम्वत् १९२० वि० में यमुनाके तटपर वे योगासनसे समाधिस्थ हो गये।

साधनोपयोगी पत्र

(१)

अपने दोषोंपर विचार करो

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र मिला। आपने अपने दुःखके जो कारण लिखे, वे तो बाहरी हैं। असली कारण तो आपका अपना उच्छृंखल मन ही है। जो मनुष्य दूसरोंके प्रति मनमें बुरे भावोंका पोषण करता है, उसको दूसरोंसे बुरे भाव—प्रतिहिंसा, वैर आदि मिलनेका भय लगा ही रहता है। वह आप ही अपने लिये दुःखोंको बुलाता है। इतना ही नहीं, वह जगत्में भी दुःख ही फैलाता है। जिसके अन्दर जैसे विचार या भाव होते हैं, उसके वचनोंसे, आकृतिसे, भावभंगीसे वही विचार प्रतिक्षण बाहर निकलते रहते हैं। उसके रोम-रोमसे स्वाभाविक ही वैसे ही परमाणु प्रकट हो-होकर दूर-दूरतक फैलते हैं और न्यूनाधिकरूपसे सबपर अपना प्रभाव डालते हैं। सजातीय विचारवालोंपर अधिक और विजातीय विचारवालोंपर कम। जैसे प्लेग, चेचक और हैजे आदि रोगोंके कीटाणु सर्वत्र फैलकर रोग फैला देते हैं, वैसे ही मनुष्यके अन्दर रहनेवाले घृणा, द्वेष, भय, वैर, शोक, विषाद, चिन्ता, क्रोध, काम, लोभ, डाह आदि मानसिक रोगोंके परमाणु भी सर्वत्र फैलकर लोगोंको रोगी बनाते हैं। आपके घरमें जो कलह है, इसमें केवल दूसरे पक्षका ही दोष हो, ऐसी बात नहीं माननी चाहिये और वस्तुतः ऐसा है भी नहीं, उसमें आपका भी दोष है और वही कलह फैलाकर आपको और घरके दूसरे लोगोंको दुखी बना रहा है। भगवान्ने गीतामें कहा है—

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्॥

(६।५-६)

‘आप ही अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है। जिसके द्वारा मन, वाणी आदि जीते हुए हैं, वह तो

आप ही अपना मित्र है और जिसके द्वारा नहीं जीते हुए हैं, उसने आप ही अपने साथ शत्रुकी तरह वैर ठान रखा है।’

जैसा अभ्यास होता है, मन वैसा ही बन जाता है। दोषदर्शनका अभ्यास हो जानेपर बिना ही हुए लोगोंमें दोष दीखने लगते हैं, इसलिये यह तो कठिन है कि इस पत्रके पढ़ते ही आपको दूसरोंके दोष दीखने बन्द हो जायँ। ऐसा हो जाय तो बड़े ही आनन्दकी बात है, परंतु आशा कम है। अतएव आप शान्ति और धीरजके साथ अपने दोषोंको भी खोजने और देखनेका प्रयत्न कीजिये। जहाँ अपने दोष दीखने लगेंगे, वहीं दूसरोंके दोष दीखने कम होने लगेंगे। फिर आगे चलकर यह दशा हो जायगी—

बुरा जो देखन मैं गया बुरा न दीखा कोय।

जो तन देखा अपना मुझ-सा बुरा न कोय॥

और जब दूसरोंके दोषकी बात याद ही न रहेगी और सब तरहसे अपने ही दोष—अपराध प्रत्यक्ष सामने रहेंगे, तब तो स्वाभाविक ही अपने दोषोंके लिये पश्चात्ताप होगा और नम्रतापूर्वक सबसे क्षमा चाहनेकी प्रवृत्ति बलवती हो उठेगी। चैतन्य महाप्रभुसे दया पाये हुए जगाई-मधार्ईका अन्तिम जीवन रो-रोकर सबसे क्षमा चाहनेमें ही बीता था। वे पश्चात्ताप और करुणाकी मूर्ति ही बन गये थे।

आपसे प्रेम है और आप मेरे कहनेको बुरा न मानकर उसे अच्छी दृष्टिसे देखेंगे तथा विचार करेंगे, यही समझकर आपको इतना लिखनेका साहस किया गया है। शेष प्रभुक्रपा।

(२)

सर्वत्र सबमें भगवान्को देखो

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपके कई पत्र मिल चुके। मेरा स्वाभाविक आलस्य आप जानते ही हैं। इसके सिवा इधर कामकी भी कुछ भीड़ रही। सर्वत्र सबमें भगवान्को देखनेका प्रयत्न करना और यथासाध्य

अधिकाधिक भगवान्‌का स्मरण करना एवं स्मरण होनेपर न भूलनेकी चेष्टा करना—ये बड़े ही उत्तम साधन हैं। सर्वत्र सबमें परमात्माको देखनेके साधनसे बहुत ही शीघ्र जीवन पलट सकता है। पाप, ताप, छल, द्रोह, दम्भ, वैर आदिका आप ही नाश हो जाता है। जो सामने आया, तत्काल उसीमें भगवान्‌ हैं, ऐसा स्मरण हो आनेसे उसके साथ दूषित बर्ताव हो ही नहीं सकता। नाटकमें नाटकका स्वामी या अपना साक्षात् पिता भी शिष्य बनकर आ सकता है। उसको स्वामी या पिता पहचानते हुए जो शिक्षकका नाट्य किया जाता है, वह स्वामीके आज्ञानुसार लीलावत् ही होता है। उसमें दोष प्रायः आ ही नहीं सकता। इसी प्रकार आप भी विद्यार्थियोंको पढ़ाते समय ‘उनमें भगवान्‌ हैं या स्वयं भगवान्‌ ही उन स्वरूपोंमें प्रकट हो रहे हैं’, ऐसा समझकर उन्हें पढ़ाइये। यही व्यवहार घरके लोगों, मित्रों, सम्बन्धियों, नौकरों आदिके साथ कीजिये तो बहुत ही शीघ्र समस्त दोषोंका ध्वंस सम्भव है। चित्तमें अपूर्व शान्ति और आनन्द तो इस साधनके संगी ही हैं। ‘वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।’ दूसरोंके साथ बुरा बर्ताव, विषम व्यवहार तभीतक होता है, जबतक हम उन्हें आत्मासे अतिरिक्त कोई दूसरा समझते हैं। जब हम यह देखेंगे कि ये सब तो हमारे आत्मा ही हैं, तब बुरा बर्ताव कैसे होगा? अपने प्रति क्या कभी कोई बुरा बर्ताव करता है? फिर, जब वे हमें भगवान्‌ दीखेंगे, तब तो हमारे पूज्य और सब प्रकारसे सेवाके पात्र बन जायेंगे। शेष प्रभूकृपा।

(३)

पतित होकर पतितपावनको पुकारे!

भाई! तुम इतना घबड़ाते क्यों हो? परमात्माकी
असीम दयालुतापर विश्वास करो। हम पतित हैं तो क्या
हुआ, वे तो ‘पतितपावन’ हैं। सचमुच पतित बनकर
पतितपावनको पुकारो—अशरण होकर अशरणशरणकी
शरण हो जाओ। फिर देखो—करोड़ों स्नेहमयी जननी

हृदयोंको भी लजा देनेवाला परमात्माका स्नेह-स्रोत उमड़ता दिखलायी देगा और तुम उसके प्रवाहमें आनन्दरूप होकर बह जाओगे। हालत खराब है तो क्या है ? लाख वर्षकी अँधेरी कोठरी प्रकाश आते ही प्रकाशित हो जाती है। वह लाख वर्षकी अपेक्षा नहीं करती। इसी प्रकार भगवान्‌के शरण होते ही सारे पाप तुरंत भस्म हो जाते हैं। मनमें दृढ़ता धारणकर भगवान्‌का स्मरण करो और अपनेको सर्वतोभावसे उनके चरणोंपर न्योछावर कर देनेकी चेष्टा करो। उनकी दयालुतापर विश्वास करो और यह दृढ़ धारणा कर लो कि 'मैं उनका हूँ, उनका अभय हस्त मेरे मस्तकपर सदा ही टिका हुआ है।' यह भावना जितनी ही बढ़ेगी, उतना ही आनन्द बढ़ेगा। नाम-जपमें मन ऊबता है तो जबरदस्ती कड़वी दवाकी भाँति ही उसका नियमपूर्वक सेवन करो। भगवान्‌के बलपर मनमें धीरज रखो। आचरणोंको उज्ज्वल बनानेकी कोशिश करो। शेष प्रभुकृपा।

$$(\gamma)$$

प्रार्थना भगवान् अवश्य सुनते हैं

प्रिय महोदय, सप्रेम हरिस्मरण! आपका एक पत्र गोरखपुर कार्यालयसे प्राप्त हुआ, जिसमें आपने प्रतिकूल समस्याओंकी चर्चा की। अपने पूर्वजन्मोंमें स्वयं अपने द्वारा किये गये कर्मोंके अनुसार जीवनमें अनुकूलता तथा प्रतिकूलता आती है। प्रतिकूलता अपने द्वारा किये गये पापका फल है; इसलिये इसे परिस्थितिवश सहन करना पड़ता है। यद्यपि इसके निराकरणके लिये अपनी विवेक-बुद्धिके अनुसार प्रयास करना चाहिये, परंतु इसका अन्तिम समाधान यह है कि इससे उबरनेके लिये बिना विचलित हुए परमात्मप्रभुसे प्रार्थना की जाय। इसी उद्देश्यसे निरन्तर भगवान्‌के नामका जप तथा एकान्तमें प्रभुसे आर्तभावसे प्रार्थना करनी चाहिये। प्रार्थना भगवान्‌ अवश्य सुनते हैं। मनकी शान्तिके लिये गीताप्रेसद्वारा प्रकाशित सत्साहित्यका अध्ययन अत्यन्त कल्याणकारी

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य दक्षिणायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, माघ कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा दिनमें ३।५४ बजेतक द्वितीया " २।४३ बजेतक	शुक्र शनि	पुष्य रात्रिमें १।३३ बजेतक आश्लेषा " १।१० बजेतक	१३ जनवरी १४ "	मूल रात्रिमें १।३३ बजेसे। भद्रा रात्रिमें २।२१ बजेसे, सिंहाराशि रात्रिमें १।१० बजेसे, मकरसंक्रान्ति दिनमें १।४८ बजे, खिचड़ी, खरमास समाप्त, शिशिर-ऋतु प्रारम्भ, सूर्य उत्तरायण।
तृतीया " १।५८ बजेतक	रवि	मघा " १।१४ बजेतक	१५ "	भद्रा दिनमें १।५८ बजेतक, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ८।३२ बजे, मूल रात्रिमें १।१४ बजेतक।
चतुर्थी " १।४३ बजेतक	सोम	पू० फा० " १।४९ बजेतक	१६ "	× × × ×
पंचमी " १।५८ बजेतक	मंगल	उ० फा० " २।५४ बजेतक	१७ "	कन्याराशि दिनमें ८।५ बजेसे।
षष्ठी " २।४७ बजेतक	बुध	हस्त " ४।२७ बजेतक	१८ "	भद्रा दिनमें २।४७ बजेसे रात्रिमें ३।२५ बजेतक।
सप्तमी सायं ४।१ बजेतक	गुरु	चित्रा रात्रिशेष ६।२८ बजेतक	१९ "	तुलाराशि सायं ५।२८ बजेसे, श्रीरामानन्दाचार्य-जयन्ती।
अष्टमी " ५।४२ बजेतक	शुक्र	स्वाती अहोरात्र	२० "	सायन कुंभराशिका सूर्य दिनमें ८।४८ बजे।
नवमी रात्रिमें ७।४२ बजेतक	शनि	स्वाती दिनमें ८।४८ बजेतक	२१ "	वृश्चिकराशि रात्रिमें ४।४४ बजेसे।
दशमी " ९।५१ बजेतक	रवि	विशाखा " ११।२१ बजेतक	२२ "	भद्रा दिनमें ८।४६ बजेसे रात्रिमें ९।५१ बजेतक।
एकादशी " १२।० बजेतक	सोम	अनुराधा " १।५९ बजेतक	२३ "	षष्टितला एकादशीव्रत (सबका), मूल दिनमें १।५९ बजेसे।
द्वादशी " १।५७ बजेतक	मंगल	ज्येष्ठा सायं ४।२९ बजेतक	२४ "	धनुराशि सायं ४।२९ बजेसे, श्रवणका सूर्य दिनमें ८।४४ बजे।
त्रयोदशी " ३।३७ बजेतक	बुध	मूल रात्रिमें ६।४४ बजेतक	२५ "	भद्रा रात्रिमें ३।३७ बजेसे, प्रदोषव्रत, मूल रात्रिमें ६।४४ बजेतक।
चतुर्दशी रात्रिशेष ४।४८ बजेतक	गुरु	पू० षा० " ८।३५ बजेतक	२६ "	भद्रा सायं ४।१२ बजेतक, मकरराशि रात्रिमें २।५७ बजेतक, गणतन्त्र-दिवस।
अमावस्या " ५।३२ बजेतक	शुक्र	उ० षा० " १०।० बजेतक	२७ "	मौनी अमावस्या।

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिशेष ५।४६ बजेतक द्वितीया " ५।२७ बजेतक	शनि रवि	श्रवण रात्रिमें १०।५६ बजेतक धनिष्ठा " ११।२० बजेतक	२८ जनवरी २९ "	× × × × कुम्भराशि दिनमें ११।८ बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें ११।८ बजे।
तृतीया रात्रिमें ४।३९ बजेतक चतुर्थी " ३।२५ बजेतक	सोम मंगल	शतभिषा " ११।१६ बजेतक पू० भा० " १०।४५ बजेतक	३० " ३१ "	× × × × भद्रा सायं ४।२ बजेसे रात्रिमें ३।२५ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत। मीनराशि सायं ४।५२ बजेसे।
पंचमी " १।५१ बजेतक	बुध	उ० भा० " ९।५४ बजेतक	१ फरवरी	वसन्तपंचमी, मूल रात्रिमें ९।५४ बजेसे।
षष्ठी " ११।५५ बजेतक	गुरु	रेवती " ८।४२ बजेतक	२ "	मेघराशि रात्रिमें ८।४२ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें ८।४२ बजे।
सप्तमी " ९।४६ बजेतक	शुक्र	अश्विनी " ७।१६ बजेतक	३ "	मूल रात्रि ७।१६ बजेतक, भद्रा रात्रि ९।४६ से, रथसप्तमी, अचलासप्तमी।
अष्टमी " ७।२९ बजेतक	शनि	भरणी सायं ५।४१ बजेतक	४ "	भद्रा दिनमें ८।३७ बजेतक, वृषराशि रात्रिमें ११।१६ बजेसे।
नवमी सायं ५।७ बजेतक	रवि	कृत्तिका " ४।० बजेतक	५ "	महानन्दानवमी।
दशमी दिनमें २।४५ बजेतक	सोम	रोहिणी दिनमें २।२१ बजेतक	६ "	भद्रा रात्रिमें १।३८ बजेसे, मिथुनराशि रात्रिमें १।३४ बजेसे, धनिष्ठाका सूर्य दिनमें १०।५६ बजे।
एकादशी " १२।२९ बजेतक	मंगल	मृगशिरा " १२।४६ बजेतक	७ "	भद्रा दिनमें १२।२९ बजेतक, जया एकादशीव्रत (सबका)।
द्वादशी " १०।२२ बजेतक	बुध	आर्द्रा " ११।२० बजेतक	८ "	कर्कराशि रात्रिमें ४।२८ बजेसे, प्रदोषव्रत।
त्रयोदशी " ८।३१ बजेतक	गुरु	पुनर्वसु " १०।११ बजेतक	९ "	× × × ×
चतुर्दशी प्रातः ६।५९ बजेतक	शुक्र	पुष्य " ९।२२ बजेतक	१० "	भद्रा प्रातः ६।५९ बजेसे रात्रिमें ६।२४ बजेतक, मूल दिनमें ९।२२ बजेसे, माघी पूर्णिमा, माघ स्नान समाप्त।
पूर्णिमा रात्रिशेष ५।५० बजेतक				

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिशेष ५।७ बजेतक	शनि	आश्लेषा दिनमें ८।५३ बजेतक	११ फरवरी	सिंहराशि दिनमें ८।५३ बजेसे।
द्वितीया " ४।५३ बजेतक	रवि	मघा " ८।५२ बजेतक	१२ "	कुंभ-संक्रान्ति रात्रिमें १२।३२ बजे, मूल दिनमें ८।५२ बजेतक।
तृतीया " ५।१० बजेतक	सोम	पू० फा० " ९।१८ बजेतक	१३ "	भद्रा सायं ५।१ बजेसे रात्रिशेष ५।१० बजेतक, कन्याराशि दिनमें ३।३३ बजेसे।
चतुर्थी " ६।१ बजेतक	मंगल	उ० फा० " १०।१७ बजेतक	१४ "	संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।२ बजे।
पंचमी अहोरात्र	बुध	हस्त " ११।४६ बजेतक	१५ "	तुलाराशि रात्रिमें १२।४३ बजेसे।
पंचमी प्रातः ७।१७ बजेतक	गुरु	चित्रा " १।४० बजेतक	१६ "	रवियोग दिनमें १।४० बजेसे।
षष्ठी दिनमें ८।५९ बजेतक	शुक्र	स्वाती " ३।५६ बजेतक	१७ "	भद्रा दिनमें ८।५९ बजेसे रात्रिमें ९।५८ बजेतक, रवियोग दिनमें ३।५६ बजेतक।
सप्तमी " १०।५८ बजेतक	शनि	विशाखा रात्रि ६।२८ बजेतक	१८ "	वृश्चिकराशि दिनमें ११।५० बजेसे, सायन मीनराशि का सूर्य रात्रिमें ८।४९ बजे।
अष्टमी " १।६ बजेतक	रवि	अनुराधा " ९।६ बजेतक	१९ "	जानकी-जयन्ती, शतभिषाका सूर्य दिनमें २।३३ बजे, मूल रात्रिमें ९।६ बजेसे।
नवमी " ३।१३ बजेतक	सोम	ज्येष्ठा " ११।३८ बजेतक	२० "	भद्रा रात्रिमें ४।१० बजेसे, धनुराशि रात्रिमें ११।३८ बजेसे।
दशमी सायं ५।७ बजेतक	मंगल	मूल रात्रिमें १।५६ बजेतक	२१ "	भद्रा सायं ५।७ बजेतक, मूल रात्रिमें १।५६ बजेतक।
एकादशी रात्रिमें ६।४४ बजेतक	बुध	पू० षा० " ३।५५ बजेतक	२२ "	विजया एकादशीव्रत (सबका)।
द्वादशी " ७।५१ बजेतक	गुरु	उ० षा० रात्रिशेष ५।२७ बजेतक	२३ "	मकरराशि दिनमें १०।१७ बजेसे।
त्रयोदशी " ८।३२ बजेतक	शुक्र	श्रवण अहोरात्र	२४ "	भद्रा रात्रिमें ८।३२ बजेसे, प्रदोषव्रत, महाशिवरात्रिव्रत।
चतुर्दशी " ८।४२ बजेतक	शनि	श्रवण प्रातः ६।२८ बजेतक	२५ "	भद्रा दिनमें ८।३७ बजेतक, कुम्भराशि रात्रिमें ६।४४ बजेसे, पंचकारम्भ रात्रिमें ६।४४ बजे।
अमावस्या " ८।१९ बजेतक	रवि	धनिष्ठा " ६।५९ बजेतक	२६ "	अमावस्या।

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें ७।२८ बजेतक	सोम	शतभिषा प्रातः ७।२ बजेतक	२७ फरवरी	मीनराशि रात्रिमें १२।४३ बजेसे।
द्वितीया सायं ६।११ बजेतक	मंगल	पू० भा० " ६।३६ बजेतक	२८ "	मूल रात्रिशेष ५।५० बजेसे।
तृतीया " ४।५७ बजेतक	बुध	उ० भा० रात्रिशेष ५।५० बजेतक		
चतुर्थी दिनमें २।३५ बजेतक	गुरु	रेवती " ४।४३ बजेतक	१ मार्च	भद्रा रात्रिमें ३।३५ बजेसे, मेषराशि रात्रिशेष ४।४३ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिशेष ४।४३ बजे।
पंचमी " १२।२६ बजेतक	शुक्र	अश्विनी रात्रिमें ३।२० बजेतक	२ "	भद्रा दिनमें २।३५ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, मूल रात्रिमें ३।२० बजेतक।
षष्ठी " १०।६ बजेतक	शनि	भरणी " १।४६ बजेतक	३ "	×
सप्तमी प्रातः ७।४३ बजेतक	रवि	कृत्तिका " १२।६ बजेतक	४ "	×
अष्टमी रात्रिशेष ५।२० बजेतक		रोहिणी " १०।२६ बजेतक	५ "	×
नवमी रात्रिमें ३।३ बजेतक	सोम	मृगशिरा " ८।४९ बजेतक	६ "	×
दशमी " १२।५६ बजेतक	मंगल	आर्द्रा " ७।२२ बजेतक	७ "	×
एकादशी " ११।३ बजेतक	बुध	पुनर्वसु सायं ६।९ बजेतक	८ "	×
द्वादशी " ९।३२ बजेतक	गुरु	पुष्य " ५।१६ बजेतक	९ "	×
त्रयोदशी " ८।२२ बजेतक	शुक्र	आश्लेषा " ४।४२ बजेतक	१० "	×
चतुर्दशी " ७।३९ बजेतक	शनि	मघा " ४।३४ बजेतक	११ "	×
पूर्णिमा " ७।२५ बजेतक	रवि	पू० फा० " ४।५५ बजेतक	१२ "	×

कृपानुभूति

(१)

हनुमान्जीकी जीवनदायिनी कृपा

घटना २७ अक्टूबर २०१४ ई० की है, मैं अपने घर शालीमार गार्डनसे हरिद्वार अपनी कारद्वारा आ रहा था। मैं सप्ताहके अन्तमें बच्चोंसे मिलने आता हूँ और पुनः सोमवारको सुबह लगभग ५ बजे हरिद्वारको प्रस्थान करता हूँ। जब भी मैं कभी यात्रा प्रारम्भ करता हूँ तो श्रीहनुमानचालीसा पढ़ना मेरी आदत है। इस बार हमारे साथ हमारे पड़ोसीके रिश्तेदार भी थे, जिन्हें मेरठ जाना था, आदतन मैंने गाड़ी स्टार्ट करते ही श्रीहनुमानचालीसा पढ़ना प्रारम्भ कर दिया।

साधारणतया मैं कारको गति ५०-६० कि० मी० ही अधिकतम रखता हूँ और आज भी लगभग इतनी ही गतिसे हम जा रहे थे। सहसा मैंने देखा कि एक खराब पेट्रोल टैंकर बीच सड़कपर खड़ा है। यह देख मैंने गति कमकर गाड़ी रोक दी। तभी अचानक एक बड़ी कारने बहुत ही तेज गतिसे आकर हमें पीछेसे टक्कर मार दी, जिससे हम कारसहित टैंकरमें घुस गये। हमारी गाड़ी उसमें फँस गयी और पीछेसे भी बुरी तरहसे क्षतिग्रस्त हो गयी। हमारे निकलनेके सारे रास्ते बन्द हो गये, चारों खिड़कियाँ क्षतिग्रस्त होनेके कारण खुल नहीं रही थीं। अँधेरा एवं सुनसान होनेके कारण कोई हमारी करुण पुकार भी नहीं सुन पा रहा था। किंतु तभी एक व्यक्ति आया और उसने हमारी कारका जो दरवाजा कम क्षतिग्रस्त था, बाहरसे खोला और हम बाहर निकले। मुझे बहुत ही मामूली चोट आयी और मेरे सहयोगीको बिलकुल नहीं। मैं तो मानता हूँ कि ये सब हनुमन्तलालके कीर्तन और हनुमानचालीसा-पाठका ही प्रभाव है। मैंने फिर पुलिसको इत्तला दी और क्रेनद्वारा कारको ट्रकके नीचेसे निकलवाया। पुलिसवालोंके कहनेपर भी मैंने किसीके खिलाफ कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की, बल्कि मैं उन सज्जनको ढूँढ़ रहा था, जिन्होंने हमारी कारका दरवाजा खोला, किंतु वे कहीं दिखायी नहीं दिये। शायद वे भी हनुमानजीकी प्रेरणासे ही आये थे।

आज इस घटनाको दो वर्षसे भी अधिक हो गया है, किंतु मुझे लगता है कि जैसे अभी-अभी सब कुछ हुआ है। मैं श्रीहनुमान्जीकी कृपाका मन-ही-मन धन्यवाद करता रहता हूँ, जिससे मुझे नया जीवन मिला।—डॉ० देवदत्त लवानिया

(२)

श्रीहनुमान्जीने पुकार सुनी

घटना पुरानी है, एक उच्चाधिकारी महोदय तीर्थयात्राके उद्देश्यसे श्रीचित्रकूट स्टेशनपर उतरे। ताँगा या किसी सवारीके अभावमें बच्चोंको दो मजदूरोंने लिया और अधिकारी महोदयकी धर्मपत्नीने एक बच्चेको स्वयं अपनी गोदमें लेकर प्रस्थान किया। वहाँसे चलकर पयस्विनीजीके तटपर पहुँचनेपर अधिकारी महोदयने कहा कि 'पहले मैं स्नान कर लूँ, फिर और लोगोंको स्नान करा दूँगा।' वे चले गये। श्रीमतीजीने सोचा कि 'मैं भी नहा लूँ' और छोटे बच्चेको लेकर वे भी स्नानके लिये चलीं। बच्चेको किनारेपर बैठाकर वे गंगाजीमें स्नान करने लगीं। वे स्नान करनेमें तन्मय हो गयीं। बच्चेका ध्यान नहीं रहा। इसी समय वह किनारेपर बैठा हुआ बच्चा नदी में खिसक गया। बच्चेका ध्यान आते ही देखा तो वह जहाँ बैठा था, वहाँ नहीं दिखायी दिया। अब तो वे बड़े जोरसे रोने-चिल्लाने लगीं। मजदूर भी दौड़े, अधिकारी महोदयने सुना तो वे भी दौड़े, बच्चेको ढूँढा, पर कहीं पता न लगा।

इधर माता जब बच्चेके लिये बेचैन होकर रो रही थीं, तभी उनका ध्यान श्रीभगवान्‌की कृपा-सुधाकी ओर गया। उन्होंने रोते-रोते ही कहा—‘भगवन्! चित्रकूट आनेपर तो दुःख दूर होते हैं, मुझे यह महान् दुःख क्यों मिला?’ उनका विलाप बढ़ता ही गया। वे जोरसे रोकर हाथ उठाकर कहने लगीं—‘हे हनुमान्‌जी! तुम्हें श्रीरामजीकी दुहाई है, मेरे लड़केको ढूँढ़कर तुरन्त ला दो।’ इस करुण प्रार्थनाको सुनकर एक मोटा-ताजा बन्दर पासके वृक्षसे गंगाजीमें कूद पड़ा और उसने कुछ ही देरमें बच्चेका हाथ पकड़कर लाकर किनारेपर बैठा दिया। उस बन्दरको केवल उन श्रीमान् अधिकारी महोदय, उनकी श्रीमतीजी तथा पासके सज्जनोंने ही देखा और उसी समय वह बन्दर अदृश्य भी हो गया। उन दोनोंके हर्षका पार न रहा। उन्होंने बच्चेके मिलनेकी प्रसन्नतामें चित्रकूटकी अपार महिमाका वर्णन किया। बच्चों तथा बन्दरोंको मिठाई बाँटी गयी, तत्पश्चात् वे चित्रकूटजीकी परिक्रमा करके अपने पूर्वनिश्चित स्थानपर चले गये। मैं भी उस समय गंगाजीमें स्नान कर रहा था, किंतु वहाँसे पर्याप्त दूर था। इसलिये मैं उस बन्दरको न देख पाया।—रामेश्वरप्रसादजी गुप्त

पढ़ो, समझो और करो

(१)

अजनबीकी सेवाका उत्कृष्ट उदाहरण

गत ५ अप्रैल २०१५ ई० को मैं सपत्नीक महाकालकी नगरी उज्जैनकी यात्रापर गया था। महाकालकी पूजा-अर्चना पूरी करके अगले दिन ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंगके दर्शनहेतु हम इन्दौर गये। वहाँ बस-स्टैंडके पास ही एक होटलमें ठहरे, अगले दिन सबेरे ही हम ओंकारेश्वरकी यात्रापर चले, मान्धाताद्वीप पहुँच हमने ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग एवं ममलेश्वर ज्योतिर्लिंगकी पूजा-अर्चना की तथा वहाँसे हम बस स्टॉपपर आ गये। सबेरेसे कुछ खाया-पिया नहीं था तो सोचा बस स्टॉपपर खा लेंगे, परंतु ११:३० बजेवाली इन्दौर जानेवाली बस तैयार खड़ी थी। प्यास बहुत लगी थी तो स्टॉपपर ही एक शिंकजीवालेसे दो गिलास शिंकजी पी ली और बसमें बैठ गये। करीब २ बजे हम इन्दौर पहुँच गये। वहीं होटलके पास ही एक गुजराती रेस्टोरेन्टमें हमने खाना खाया और होटलमें वापस आ गये।

अभी एक घण्टा बीता होगा, अचानक मेरे पेटमें दर्द-सा हुआ और मुझे उल्टी हो गयी, फिर दस्त हुआ। कुछ देर बाद तो फिर वही क्रम आरम्भ हो गया, मुझे हैजा (डायरिया) हो गया और इस तरह लगातार उल्टी-दस्तोंसे मेरा शरीर निर्जीव-सा हो गया। बुढ़ापेके शरीरमें सहनशक्ति समाप्त होने लगी। पत्नी पासके मेडिकल स्टोरसे हाल बताकर दवा लायी, उससे भी आराम नहीं मिला और पानी भी पिया तो वह भी नहीं पचा, अब मेरी बिगड़ती स्थिति देख पत्नीने होटलमें काम करनेवाले युवकसे किसी डॉक्टरको बुला लानेको कहा—वह युवक थोड़ी देर बाद लौटा, बोला—ऑन्टीजी! ९ बजे हैं, इस समय डॉक्टरोंकी दुकानें बन्द हो गयी हैं। कोई डॉक्टर उपलब्ध नहीं है। पत्नीने फिर कहा कि कोई अस्पताल निकटमें हो तो वहीं ले चलो। इसपर वह युवक बोला, 'मैं अभी आता हूँ।' वह अपने एक मित्रकी साथ लेकर आया और बोला—अब चलो

अस्पताल ले चलना है। एक ऑटो ले आओ', थोड़ी ही देरमें ऑटो आ गया। दोनों युवकोंने मुझे सहारा देकर ऑटोमें बिठाया और ड्राइवरसे बोले—'महाराजा यशवन्तराव हॉस्पिटल चलो। हम मोटर साइकिलसे आते हैं।' दोनों युवकोंने अस्पताल पहुँचकर मुझे सहारा देकर इमरजेन्सी वार्डमें पहुँचाया तथा वहाँ उपस्थित डॉक्टरसे प्रार्थना की कि आप हमारे अंकलको देख लें, इनकी हालत बहुत खराब है।

डॉक्टरने तुरन्त मेरा चेकअप करके मुझे बेडपर लेटनेको कहा—मुझे एक इन्जेक्शन देकर उन्होंने अपने असिस्टेन्टको कहा कि इन्हें तुरन्त ग्लूकोजकी बोतल चढ़ाओ। मुझे ग्लूकोज चढ़ानेके बाद पत्नीने उन युवकोंसे खाना खा लेनेको कहा। वे बोले, 'हम खाना खा लेंगे, पहले अंकलका इलाज तो आरम्भ हो जाय।'

ग्लूकोजकी एक बोतल चढ़ाते ही मुझे सर्दी लगने लगी, मैं ठण्डसे काँपने लगा। पत्नीने वार्डमें कम्बल माँगा तो पता चला कि गर्मियोंमें कम्बल स्टोर में जमा हो गये हैं। कम्बल बाहर उपलब्ध नहीं हो सका। दोनों युवक वहींपर थे, वे बोले, 'हम होटल जाकर वहाँसे कम्बल ले आते हैं।' होटल वहाँसे ४-५ किलोमीटर दूर था। थोड़ी देर बाद ही वे कम्बल ले आये, मुझे चैन मिला। दोनों युवक रात्रिके ४ बजेतक वहीं मेरी देखभालमें लगे रहे। तीन-चार बोतल ग्लूकोज चढ़ा तो मुझे नींद आ गयी। थोड़ी देर बाद डॉक्टरने मेरा चेकअप करके कहा—'अब इनकी हालत ठीक है, आप चाहें तो इन्हें ले जा सकते हैं।'

अस्पतालके वातावरणसे मुझे वैसे ही घबराहट हो रही थी, मैंने चलनेके लिये कहा। थोड़ी देरमें हम होटल आ गये। होटल आनेपर मुझे गहरी नींद लगी और मैं सबेरे ९ बजे उठा तो वे दोनों युवक मेरा हाल जाननेके लिये पुनः आये। मैंने उन्हें हृदयसे धन्यवाद दिया कि आपने जो उत्कृष्ट सेवाका परिचय दिया, वह अत्यन्त सराहनीय है और मैं आज जवन जाँका आया हूँ।

मुख्यालयमें बदली करवानेके एक साल बादकी बात है, तारीख मुझे याद नहीं। फायरिंगमें कोई २० बम (गोले) मिस हो गये थे। उन्हें नष्ट करनेके लिये सक्षम अधिकारीके साथ उसी कमाण्डरको जाना पड़ा। ३ मिनटमें मिस बमोंको अतिरिक्त बारूद बर्बाद कर देती है, आज किंतु पता नहीं क्यों, ३५ मिनटतक कोई हलचल नहीं हुई। सक्षम अधिकारीके साथ वह कमाण्डर पुनः उस जगह गया। हम सभी दूर लेट गये। ५० मीटर दूरी रह गयी। कमाण्डरने अधिकारीको

वापस भेजा और स्वयं आगे बढ़ा, ज्यों ही वह कमाण्डर गड्डेके पास पहुँचा, जबरदस्त दो धमाके हुए, जैसे आसमान हिल गया। धरती काँप गयी। एक ही साथ २० बम फट गये—बर्बाद हो गये, उसीमें उस कमाण्डरका नामोनिशान मिट गया। बहुत खोजबीनकर २०० ग्राम चिथड़े लेकर पुलिसमैन आया। सूचना ऊपर गयी। सब कह रहे थे—गोमाताके हत्यारेका परिणाम देखा! जैसी करनी वैसा फल। घटना देख/सुनकर कुछ जवान कहने लगे—पाप! वह भी घोर पाप—हजारों गायोंकी हत्याका पाप फल देकर ही गया। लिखते समय पूरी घटना मेरे दिमागमें घूम गयी।

—राजबहादुर शर्मा

(३)

निष्काम सेवाका सुपरिणाम

यह घटना लगभग १०-१२ वर्ष पुरानी है। मेरे एक मित्र हैं श्रीतोमरजी। उनका निवास मेरे मुहल्लेके समीप ही है। एक दिन वे और उनका छोटा पुत्र मेरे पास आये। तोमरजीने बतलाया कि मेरी पुत्रवधूका चयन माध्यमिक विद्यालयहेतु आयोगसे हो गया है और अलीगढ़ जिला दिया गया है। आयोगमें यह नियम है कि यदि किसी अन्य जिलेमें स्थानान्तरण करवाना हो तो उस विद्यालयसे एक प्रस्ताव पास कराकर जिला विद्यालय निरीक्षकके माध्यमसे आयोग सचिवको भेज दिया जाय। पुत्रवधूका विषय गणित और साइंस था। मुझे स्मरण आया कि एक प्रधानाचार्यजीने मुझसे साइंस-गणितके लिये शिक्षक देनेको कहा था। मैंने उनको फोन किया तो उन्होंने बतलाया कि अभी जगह खाली है। उन्होंने प्रस्ताव बनवाकर प्रबन्ध-समितिसे पास कराकर जिला विद्यालय निरीक्षकके पास भिजवा दिया। वहाँपर ऑफिसवालोंने बतलाया कि वह पद आरक्षित है। उसपर नियुक्ति नहीं हो सकती है। उन्होंने एक विद्यालयका नाम बतलाया, जहाँ पद रिक्त है और आरक्षित नहीं है। वहाँसे प्रस्ताव पास कराकर आयोगको भेज दिया गया। उस बीच आयोगके चयनपर प्रतिबन्ध

था। कुछ माह बाद प्रतिबन्ध समाप्त हुआ और आयोगने उसे उस विद्यालयमें नियुक्तिहेतु भेज दिया। उस बीच उस विद्यालयकी प्रबन्ध-समिति बदल चुकी थी और प्रबन्धक उन्हें लेनेके लिये तैयार नहीं थे। मेरे मित्र तथा उनका पुत्र बहुत परेशान था।

एक दिन उनके पुत्रको ज्ञात हुआ कि प्रबन्ध-समितिकी बैठक शीघ्र ही होनेवाली है। यद्यपि उस प्रबन्ध-समितिमें उसका कोई परिचय नहीं था, फिर भी ईश्वरकी प्रेरणासे वह वहाँ गया और बरामदेमें टहलने लगा। बैठकमें एक महिला सदस्य भी थीं। उन्होंने देखा कोई लड़का बाहर टहल रहा है। उन्होंने उसे गौरसे देखा और अन्दर बुलाया तथा पूछा कि तुमने कभी किसीको ब्लड (रक्त) दिया है? उसने कहा—नहीं। वह फिर बोली, 'आजसे ८-९ वर्ष पूर्व, जरा याद करो।' उसे याद आया और कहा 'हाँ, मेरे एक मित्रने कहा था, तो दे दिया था।' महिलाने पूछा—यहाँ क्यों आये हो? उसने संक्षेपमें कारण बतलाया। महिलाने एक कागजपर अपना नाम और पता लिख दिया और कहा कि शामको घरपर आना।

शामको लड़का घर पहुँचा, तब महिलाने बतलाया कि तुमने जिसको खून दिया था, वे मेरे पति हैं। विद्यालयके मैनेजर उनके जेठ थे। महिलाने प्रबन्धकको फोन किया और कहा 'भाई साहब, आयोगसे जिस महिलाका चयन होकर आया है, उसके पतिने ही आपके भाईकी जान ८-१० वर्ष पूर्व बचायी थी। उसने ही खून दिया था। अतः कृपया उसका कार्य कर दें तथा उसकी पत्नीको ज्वाइन करवा लें। वह तो भूल गया था, मुझे ही उसका चेहरा याद आया।' मैनेजर साहबने दूसरे ही दिन उसकी पत्नीको ज्वाइन करवा दिया।

यह घटना निष्काम कर्मयोगका फल बतलाती है। उस निष्काम कर्मयोगका फल पता नहीं क्या और कब मिले, पर मिलेगा जरूर। मैं उस घटनासे अधिक प्रभावित हुआ तथा अन्य लोगोंको भी निष्काम कर्म करनेहेतु प्रेरित करता रहता हूँ।—रमाकान्त शक्ल

मनन करने योग्य चाटुकारिता अनर्थकारिणी है

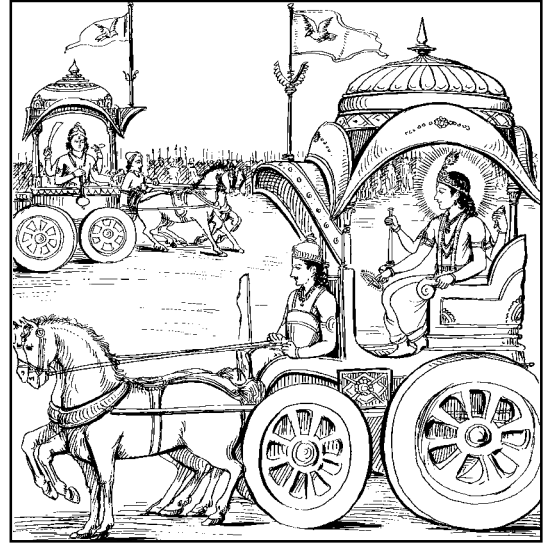
बड़ी मीठी लगती है चाटुकारिता और एक बार जब चाटुकारोंकी मिथ्या प्रशंसा सुननेका अभ्यास हो जाता है, तब उनके जालसे निकलना कठिन होता है। चाटुकार लोग अपने स्वार्थकी सिद्धिके लिये बड़े-बड़ोंको मूर्ख बनाते रहते हैं और आश्चर्य यही है कि अच्छे लोग भी उनकी झूठी प्रशंसाको सत्य मानते रहते हैं!

चरणाद्रि (चुनार) उन दिनों करुषदेशके नामसे विख्यात था। वहाँका राजा था पौण्ड्रक। उसको चाटुकार सभासद् कहते थे—‘आप तो अवतार हैं। आप ही वासुदेव हैं। भूभार दूर करनेके लिये आप साक्षात् नारायणने अवतार धारण किया है। आपकी सेवा करके हम धन्य हो गये। जो आपका दर्शन कर पाते हैं, वे भी धन्य हैं।’

पौण्ड्रक इन चाटुकारोंकी मिथ्या प्रशंसामें ऐसा भूला कि उसने अपनेको वासुदेव कहना प्रारम्भ किया। वह दो कृत्रिम हाथ लगाकर चतुर्भुज बना रहने लगा और शंख, चक्र, गदा तथा कमल उन हाथोंमें लिये ही रहनेका उसने अभ्यास कर लिया। अपने रथकी पताकापर उसने गरुडका चिह्न बनवाया। बात यहीँतक रहती, तब भी कोई हानि नहीं थी; किंतु उसने तो गर्वमें आकर दूत भेजा द्वारका। श्रीकृष्णचन्द्रके पास यह सन्देश भेजा उसने—‘कृष्ण! मैं ही वासुदेव हूँ। भूभार दूर करनेके लिये मैंने ही अवतार धारण किया है। यह बहुत अनुचित बात है कि तुम भी अपनेको वासुदेव कहते हो और मेरे चिह्न धारण करते हो। तुम्हारी यह धृष्टता सहन करने योग्य नहीं है। तुम वासुदेव कहलाना बन्द करो और मेरे चिह्न छोड़कर मेरी शरण आ जाओ। यदि तुम्हें यह स्वीकार न हो तो मुझसे युद्ध करो।’

द्वारकाकी राजसभामें दूतने यह सन्देश सुनाया तो यादवगण देरतक हँसते रहे पौण्ड्रककी मूर्खतापर। श्रीकृष्णचन्द्रने दूतसे कहा—‘जाकर कह दो पौण्ड्रकसे कि युद्ध-भूमिमें मैं उसपर अपने चिह्न छोड़ूँगा।’

पौण्ड्रकको गर्व था अपनी एक अक्षौहिणी सेनाका। अकेले श्रीकृष्णचन्द्र रथमें बैठकर करुष पहुँचे तो वह पूरी सेना लेकर उनसे युद्ध करने आया। उसके साथ उसके मित्र काशीनरेश भी अपनी एक अक्षौहिणी सेनाके साथ आये थे। पौण्ड्रकने दो कृत्रिम भुजाएँ तो बना ही



रखी थीं, शंख-चक्र-गदा-पद्मके साथ नकली कौस्तुभ भी धारण किया था उसने। नटके समान बनाया उसका कृत्रिम वेश देखकर श्रीकृष्णचन्द्र हँस पड़े।

पौण्ड्रक और काशिराजकी दो अक्षौहिणी सेना तो शार्ङ्गसे छूटे बाणों, सुदर्शन चक्रकी ज्वाला और कौमोदकी गदाके प्रहारमें दो घण्टे भी दिखायी नहीं पड़ी। वह जब समाप्त हो गयी, तब द्वारकाधीशने पौण्ड्रकसे कहा—‘तुमने जिन अस्त्रोंके त्यागनेकी बात दूतसे कहलायी थी, उन्हें छोड़ रहा हूँ। अब सम्हलो!’

गदाके एक ही प्रहारने पौण्ड्रकके रथको चकनाचूर कर दिया। वह रथसे कूदकर पृथ्वीपर खड़ा हुआ ही था कि चक्रने उसका मस्तक उड़ा दिया। उस चाटुकारिताप्रिय मूर्ख एवं पाखण्डीका साथ देनेके कारण काशिराज भी युद्धमें मारे गये। [श्रीमद्भागवत-महापुराण]

(भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिक पत्र)

‘कल्याण’

-के १०वें वर्ष (वि०सं० २०७२-७३, सन् २०१६ ई०)-के दूसरे अङ्कसे बारहवें अङ्कतकके

निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची

(विशेषाङ्ककी विषय-सूची उसके आरम्भमें देखनी चाहिये, वह इसमें सम्मिलित नहीं है।)

निबन्ध-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- अकिंचन कौन ? (श्रीसुदर्शनसिंहजी ‘चक्र’) सं०४-पृ०२२		विशेषाङ्क ‘श्रीशिवमहापुराणाङ्क’ सं०७-पृ०४९	
२- अणुयुद्ध हुआ तो गायके गोबरसे लिपा घर ही बचेगा (श्रीरजतकुमारजी) सं०७-पृ०३९		२५- कविताओंमें गंगा : एक चयनिका (श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव) सं०६-पृ०२५	
३- अतिथिदेवो भव (डॉ० श्रीओमप्रकाशजी वर्मा) ... सं०१०-पृ०२०		२६- कश्मीर-प्रदेशके शक्तिपीठ (पं० श्रीजानकीनाथजी कौल ‘कमल’, एम० ए०, बी० टी०, प्रभाकर) सं०१२-पृ०२७	
४- अपनी निर्बलता और भगवान्की कृपा (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) सं०७-पृ०१२		२७- कहानीका असर [कहानी] (मास्टर श्रीपारसचन्दजी) सं०११-पृ०२७	
५- अमूल्य शिक्षा (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) सं०९-पृ०७		२८- काशीमें देवियोंके मन्दिर और उनकी यात्रा (पं० श्रीशालिग्रामजी शर्मा) सं०१०-पृ०२०	
६- अमृत-कण सं०३-पृ०१६		२९- कृत्तिवास रामायणमें गंगावर्णन [अनु०—श्रीमथुराप्रसादजी] [प्रेषक—श्रीअवधबिहारीजी शुक्ल] सं०६-पृ०२४	
७- अवन्तिका-माहात्म्य सं०७-पृ०४४		३०- कृपानुभूति सं०२-पृ०४६, सं०३-पृ०४५, सं०४-पृ०४६, सं०५-पृ०४६, सं०६-पृ०४६, सं०७-पृ०४३, सं०८-पृ०४६, सं०९- पृ०४५, सं०१०-पृ०४५, सं०११-पृ०४६, सं०१२-पृ०४२	
८- आगमोंका स्वरूप और वैखानस-आगम (डॉ० श्रीबसन्तबल्लभजी भट्ट, एम०ए०, पी-एच०डी०) .. सं०८-पृ०३२		३१- कैसे बनें भगवान्के प्रेमी भक्त ? (डॉ० श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति) सं०१२-पृ०२९	
९- आजके सत्संग (श्रीसुदर्शनसिंह ‘चक्र’जी) [प्रेषक—श्रीजनार्दनजी पाण्डेय] सं०२-पृ०२८		३२- कौरव-सभामें श्रीकृष्णका विराट्-रूप [आवरणचित्र-परिचय] सं०७-पृ०६	
१०- आज भी खरे हैं तालाब [पर्यावरण-चिन्तन] (श्रीअनुपमजी मिश्र) सं०८-पृ०२३		३३- खतरनाक चोर (गोलोकवासी महात्मा श्रीरामचन्द्र डोंगरेजी महाराज) सं०५-पृ०२५	
११- आदर्श कर्मठता [प्रेरक-प्रसंग] सं०१२-पृ०१९		३४- खेलत स्यामा-स्याम ललित ब्रजमें रस-होरी (श्रीअर्जुनलालजी बंसल) सं०३-पृ०१९	
१२- आदर्श बी०ए० बहू [प्रेरक कथा] (पं० श्रीरामनरेशजी त्रिपाठी) सं०१०-पृ०३१		३५- गंगा, कर्णवास तथा काका हाथरसी (श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव) सं०३-पृ०२४	
१३- आध्यात्मिकताकी अपेक्षा (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) .. सं०३-पृ०१२		३६- गंगा-गौरव सं०२-पृ०७	
१४- आध्यात्मिक लीलाका रहस्य (ब्रह्मलीन वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज) [प्रेषक—स्वामी श्रीआनन्दस्वरूपजी] सं०३-पृ०१५		३७- गंगाधर भगवान् शंकर [आवरणचित्र-परिचय] सं०२-पृ०६	
१५- आनन्दरामायण—एक संक्षिप्त परिचय (डॉ० श्रीबसन्तवल्लभजी भट्ट, एम०ए०, पी-एच०डी०) सं०४-पृ०३२		३८- गंगावतरण (डॉ० श्रीकमलाकान्तजी शर्मा ‘कमल’, एम०ए०, पी-एच० डी०) सं०२-पृ०३२	
१६- ‘ईस्वर अंस जीव अबिनासी’ (श्रीत्रिय ब्रह्मनिष्ठ श्रीवेदान्तीजी महाराज) [प्रेषक—श्रीमोहनकुमारजी शर्मा] सं०७-पृ०१४		३९- गाण्डीव धनुषका इतिहास (पण्डित श्रीजानकीनाथजी शर्मा) सं०६-पृ०३३	
१७- उत्तरदायी कौन ? (श्रीरामदेवसिंहजी शर्मा) सं०६-पृ०३१		४०- ‘गावो विश्वस्य मातरः’ (अनन्तश्रीविभूषित ज्योतिषीठाधीश्वर एवं श्रीद्वारकाशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्दसरस्वतीजी महाराज) सं०५-पृ०१६	
१८- उतार-चढ़ाव [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] सं०२-पृ०३०		४१- गोपालन और गोचर भूमि (प्रो० डॉ० श्रीबाबूलालजी, डी० लिट०) सं०९-पृ०४१	
१९- उदार व्यवहार हर स्थितिमें प्रसन्नतादायक सं०११-पृ०३२		४२- गोपी-प्रेमका वैशिष्ट्य (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) .. सं०२-पृ०४२	
२०- उद्धार और अधोगति (श्रीबजरौरसिंहजी) सं०१२-पृ०२०		४३- गोमाताकी आधिदैविक शक्ति (गोलोकवासी पं० श्रीलालबिहारीजी मिश्र) सं०४-पृ०३८	
२१- कर्तव्यपालन भी आवश्यक (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) सं०५-पृ०९		४४- गोमूत्रमें छिपे जीवनसूत्र [संकलनकता—श्रीप्रशान्तजी अग्रवाल] सं०११-पृ०४८	
२२- कलियुगका परम साधन (श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी महाराज) सं०११-पृ०१२			
२३- कल्याण— ... सं०२-पृ०५, सं०३-पृ०५, सं०४-पृ०५, सं०५-पृ०५, सं०६-पृ०५, सं०७-पृ०५, सं०८-पृ०५, सं०९-पृ०५, सं०१०-पृ०५, सं०११-पृ०५, सं०१२-पृ०५			
२४- ‘कल्याण’ का आगम ११वें वर्ष (सन् २०१७ ई०)-का			

विषय	पृष्ठ-संख्या
४५- गोमूत्रमें मिला सोना	सं०१०-पृ०८
४६- गोमूत्रसे कैसरका उपचार	सं०६-पृ०४१
४७- गोरक्षाका प्रश्न [राधेश्याम खेमका]	सं०१०-पृ०५०
४८- गोवंशकी रक्षा कैसे हो ? (डॉ० श्रीब्रह्मानन्दजी) ...	सं०२-पृ०४०
४९- गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीकी गंगा-स्तुति (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी)	सं०२-पृ०२१
५०- गोहत्यामें निमित्त बननेका परिणाम	सं०८-पृ०४१
५१- चित्त-शुद्धि (तत्त्वदर्शी महात्मा श्रीतैलंग स्वामीजी महाराज) ...	सं०११-पृ०२४
५२- चूड़ामणि (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०३-पृ०२८
५३- चोरीसे नहीं जाऊँगी [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०२-पृ०३८
५४- चौधरीजीका मायरा [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०५-पृ०२६
५५- जगत्स्वप्न (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल)	सं०६-पृ०१७
५६- जगद्गुरु [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०६-पृ०२९
५७- जन्मान्तरीय पुण्यकर्मोंसे सत्संगकी प्राप्ति	सं०२-पृ०२९
५८- जिस देशमें गंगा-जमुना बहती हैं [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०३-पृ०३६
५९- जीवनका सच्चा लाभ (श्रीबरजोरसिंहजी)	सं०५-पृ०२४
६०- जीवनकी सार्थकता और आधुनिक मूल्य [चिन्तन] (आचार्य श्रीतुलसीजी)	सं०४-पृ०१६
६१- जीवोंकी स्वतन्त्रता (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) ..	सं०१०-पृ०९
६२- ज्ञानकी दुर्लभता और उसकी प्राप्तिका उपाय (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०२-पृ०९
६३- डेंगू बुखारका आसान आयुर्वेदिक उपचार (डॉ० श्रीदीलीपकुमारजी)	सं०१२-पृ०३४
६४- ‘.....ताहि बोड तू फूल!’ (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) ..	सं०१२-पृ०१४
६५- दयाका पुरस्कार	सं०११-पृ०३९
६६- दानके दृष्टान्त [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०११-पृ०३३
६७- दारुब्रह्म श्रीजगन्नाथ और पूर्णब्रह्म श्रीरामभद्र (श्रीनिमाइचरणजी मिश्र)	सं०७-पृ०२४
६८- दुःखमें सुख [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०७-पृ०३६
६९- दुर्गासप्तशती : मोक्षदायिनी कथा (प्रो० श्रीयमुनाप्रसादजी)	सं०६-पृ०२२
७०- दुर्व्यसनोंसे मुक्ति [प्रेरक-कथा] (भक्त श्रीरामशरणदासजी)	सं०४-पृ०१३
७१- दृढ़निश्चय [प्रेरक-प्रसंग]	सं०७-पृ०३७
७२- दृढ़ निश्चयकी शक्ति (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी)	सं०६-पृ०१०
७३- देवर्षि नारद [आवरणचित्र-परिचय]	सं०५-पृ०६
७४- द्वार खोलो ! [कहानी] (श्री ‘चक्र’)	सं०५-पृ०३२
७५- धर्मका स्वरूप (श्रीअमृतलालजी गुप्ता)	सं०५-पृ०३७
७६- नटराज-उपाधिके रहस्य (श्री ‘प्रसन्न’)	सं०७-पृ०११
७७- नम्रताके व्यवहारसे पराभव नहीं होता [नीतिकथा]	सं०५-पृ०१५
७८- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची	सं०१२-पृ०४७
७९- नियमोंके पालनसे कल्याण (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०३-पृ०८
८०- निश्चिन्त हो रहो (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल) ..	सं०२-पृ०१५
८१- पढ़ो, समझो और करो	सं०२-पृ०४७, सं०३-पृ०४७,

विषय	पृष्ठ-संख्या
सं०४-पृ०४७, सं०५-पृ०४७, सं०६-पृ०४७, सं०७-पृ०४७, सं०८- पृ०४७, सं०९-पृ०४७, सं०१०-पृ०४६, सं०११-पृ०४७, सं०१२-पृ०४२	
८२- परमात्माके आनन्दमय स्वरूपका ध्यान (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०६-पृ०७
८३- परमार्थतः अजर-अमरके लिये रोना व्यर्थ (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) ..	सं०११-पृ०९
८४- परोपकार (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०८-पृ०७
८५- पवित्र जीवनका साधन (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) ..	सं०८-पृ०१४
८६- पाकिस्तानके पाँच पवित्र मन्दिर (श्रीशैलेन्द्रसिंहजी)	सं०९-पृ०२७
८७- पापका फल (पं० श्रीआनन्दस्वरूपजी पाण्डेय) ...	सं०११-पृ०३५
८८- पावन गंगा (श्रीएरिक न्यूबीजी) [अंग्रेजी अनु०—श्रीअनिकेन्द्रनाथ] [हिन्दी अनु०—डॉ० श्रीभानुशंकरजी मेहता]	सं०४-पृ०१७
८९- पुण्यप्रदर्शनका फल : बालि-प्रसंग (पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय) [प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]	सं०११-पृ०२२
९०- पुष्पकारुढ श्रीराम [आवरणचित्र-परिचय]	सं०१०-पृ०६
९१- प्रतिकूलताका नाश (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .	सं०१०-पृ०७
९२- प्रभो ! आपको कैसे प्रसन्न करें ? [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०१२-पृ०३३
९३- प्रेमका पन्थ निराला है ! (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) ...	सं०११-पृ०१८
९४- प्रेमी भक्त और भगवान् (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०३-पृ०३९
९५- बन्धनोंसे छूटनेका नाम मुक्ति (ब्रह्मलीन वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज) [प्रेषक—श्रीज्ञानचन्द्रजी गर्ग]	सं०६-पृ०११
९६- बलात्कारके समय क्या करें ? (महात्मा गांधी)	सं०८-पृ०३७
९७- बलिदानकी परम्परा [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०९-पृ०३३
९८- भक्तका किसीसे राग-द्वेष नहीं होता (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०४-पृ०३७
९९- भक्तकी बात (स्वामी श्रीभोलेबाबाजी)	सं०१२-पृ०९
१००- भक्तगाथा (संत श्रीखुशालबाबा) (श्रीपांडुरंग सदाशिवजी ब्रह्मणपुरे ‘कोविद’)	सं०६-पृ०३५
१०१- भक्त रामप्रसाद [भक्त-चरित] (संत श्रीप्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी)	सं०९-पृ०३५
१०२- भक्त श्रीगणेश योगीन्द्र [संत-चरित] (पं० श्रीदामोदर प्रह्लादजी पाठक, शास्त्री)	सं०१०-पृ०२८
१०३- भगवती गंगा मंगलका विस्तार करें	सं०२-पृ०१४
१०४- भगवती गायत्री [आवरणचित्र-परिचय]	सं०६-पृ०६
१०५- भगवदर्थ कर्म और भगवान्की दयाका रहस्य (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	सं०७-पृ०७
१०६- भगवद्गीता-विज्ञान (श्रीसुमितचन्द्रजी श्रीवास्तव, एम० एस-सी०) ...	सं०१०-पृ०२५
१०७- भगवन्नाम-महिमा (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०५-पृ०७
१०८- भगवान् कपिलका प्रादुर्भाव (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) ..	सं०२-पृ०११
१०९- भगवान्का परम भक्त कौन ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०१०-पृ०११
११०- भगवान्के बने (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०९-पृ०१०
१११- भगवान्के लिये काम कैसे किया जाय ? (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .	सं०११-पृ०७

विषय	पृष्ठ-संख्या
११२- भगवान् दक्षिणामूर्तिकी भद्रा मुद्रा (श्रीजशवन्तराय जयशंकर हाथी)	सं०८-पृ०२२
११३- भगवान् मन कैसे लगे ? (श्रीभैरवलालजी परिहार) ..	सं०९-पृ०१७
११४- भगवान् वराहका दिव्य स्वरूप [आवरणचित्र-परिचय] ..	सं०९-पृ०६
११५- भगवान् विष्णु किससे प्रसन्न रहते हैं	सं०८-पृ०२१
११६- भगवान् सगुण हैं या निर्गुण ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०६-पृ०१३
११७- भगवान्से अन्तरंगता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०८-पृ०१२
११८- भगवान् शिवका वर-वेष [आवरणचित्र-परिचय] ..	सं०३-पृ०६
११९- भजनकी आवश्यकता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०१२-पृ०११
१२०- भजन कैसे करें ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०४-पृ०११
१२१- भजन कैसे करें ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०५-पृ०१२
१२२- भावकी शुद्धिसे कर्मकी शुद्धि (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०७-पृ०३५
१२३- मकर-संक्रान्तिपूर्वपर गंगासागरयात्रा (श्रीराजेन्द्रप्रसादजी त्रिपाठी) ..	सं०२-पृ०१६
१२४- मधुराद्वैताचार्य संत श्रीगुलाबरावजी महाराज (डॉ० श्रीअरविन्द सं० जोशी मेहेकर)	सं०७-पृ०३१
१२५- मनन करने योग्य... सं०२-पृ०५०, सं०३-पृ०५०, सं०४-पृ०५०, सं०५-पृ०५०, सं०६-पृ०५०, सं०७-पृ०४८, सं०८-पृ०५०, सं०९- पृ०५०, सं०१०-पृ०४९, सं०११-पृ०५०, सं०१२-पृ०४६	
१२६- मन्त्र-चैतन्य (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल)	सं०९-पृ०१३
१२७- मन्त्र-सिद्धि [कहानी] (श्रीसुरेन्द्रनरसिंहजी 'चक्र')	सं०७-पृ०२७
१२८- महारसायन (श्रीसीतारामदासजी ओंकारनाथ)	सं०१०-पृ०२२
१२९- माता जानकीसे गोस्वामीजीकी प्रार्थना [आवरणचित्र-परिचय]	सं०८-पृ०६
१३०- मानव जीवनकी धन्यता (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज)	सं०१२-पृ०१०
१३१- मानव जीवनमें गुण-दोष (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..	सं०१०-पृ०३६
१३२- मानवताकी सफल योजना (स्वामी श्रीनारदानन्दजी सरस्वती)	सं०५-पृ०२१
१३३- मानसिक तनावके शमनमें मानसिक भावनाओंका महत्त्व (डॉ० श्री ओ० पी० द्विवेदी एवं डॉ० श्रीराजेन्द्रप्रसादजी द्विवेदी)	सं०९-पृ०३०
१३४- माँ गंगाके जलप्रवाहमें प्रभुका प्रेमप्रवाह बहता है (श्रीबालकृष्णजी मेहता)	सं०२-पृ०२४
१३५- मेरा नहीं है, प्रभुका है, मेरे लिये नहीं है, प्रभुके लिये है (श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति)	सं०५-पृ०२८
१३६- मेरी माँकी रक्षा करना [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०९-पृ०४०
१३७- मेरे वैरि-भावकी रक्षा करना [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०११-पृ०३७
१३८- माँकी कृपा (महात्मा श्रीसीतारामदास ओंकारनाथजी महाराज)	सं०१२-पृ०२२
१३९- मैं कौन हूँ और मेरा क्या कर्तव्य है ? (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) .	सं०१२-पृ०७
१४०- 'मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत' (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०३-पृ०१३

विषय	पृष्ठ-संख्या
१४१- यथार्थ मानव (ब्रह्मलीन स्वामी श्रीहरिबाबाजी महाराज) ..	सं०६-पृ०१२
१४२- यमुनोत्तरी [तीर्थाटन] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०४-पृ०२३
१४३- योग : एक विश्लेषण (डॉ० श्रीइन्द्रमोहनजी झा 'सच्चन', पी-एच०डी० (आयुर्वेद), डिप्लोमा इन योग)	सं०३-पृ०३२
१४४- रसखान-काव्यमें गो और गोपाल (श्रीजयदीपसिंहजी, एम०ए० (हिन्दी))	सं०३-पृ०४०
१४५- राजाकी सीख	सं०११-पृ०१४
१४६- राधा बिना कृष्ण आधा (श्रीफतेहचन्दजी अग्रवाल) ..	सं०१०-पृ०१४
१४७- रामदास काठियाबाबा [संत-चरित] (श्रीरामलालजी) ..	सं०१२-पृ०३५
१४८- राम-नामका अखूट खजाना (महात्मा गाँधीजी) ...	सं०७-पृ०३८
१४९- राम-नाम क्या है ? (श्रीयोगेश्वरजी त्रिपाठी 'योगी') ...	सं०६-पृ०३२
१५०- रामराज्यमें पर्यावरण-नीति [पर्यावरण-चिन्तन] (श्रीबालकृष्णजी कुमावत)	सं०९-पृ०२३
१५१- रूप-स्मरणका प्रभाव [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०७-पृ०३४
१५२- लक्ष्मी गुणवान्के पास जाती हैं	सं०२-पृ०३१
१५३- विएतनाममें शिवाजी महाराजकी प्रेरणा (श्रीकेलाशजी बंसल) [प्रेषक—श्रीसुरेन्द्रकुमारजी गोयल]	सं०३-पृ०२१
१५४- विदेशोंके कुछ शिवलिंग तथा देवमूर्तियाँ	सं०९-पृ०२९
१५५- विश्वका कल्याण हो	सं०११-पृ०२९
१५६- वीर अभिमन्यु [शौर्यकथा] (डॉ० श्रीश्यामसुन्दरजी निगम)	सं०९-पृ०२०
१५७- वेदोंके अनुसार ब्रह्माण्डका दिव्य अप—गंगा (श्रीरामजी शास्त्री)	सं०३-पृ०२२
१५८- व्रतोत्सव-पूर्व .. [चैत्रमासके व्रतपूर्व]—सं०२-पृ०४५, [वैशाखमासके व्रतपूर्व]—सं०३-पृ०४४, [ज्येष्ठमासके व्रत-पूर्व]—सं०४-पृ०४५, [आषाढ- मासके व्रत-पूर्व]—सं०५-पृ०४५, [श्रावणमासके व्रतपूर्व]—सं०६-पृ०४३, [भाद्रपदमासके व्रतपूर्व]—सं०८-पृ०४३, [अश्विनमासके व्रतपूर्व]—सं०९- पृ०४४, [कार्तिकमासके व्रतपूर्व]—सं०१०-पृ०३९, [मार्गशीर्षमासके व्रत- पूर्व]—सं०११-पृ०४४, [पौषमासके व्रतपूर्व]—सं०११-पृ०४५, [माघमास- के व्रतपूर्व]—सं०१२-पृ०४०, [फाल्गुनमासके व्रतपूर्व]—सं०१२-पृ०४१	
१५९- शक्तिका संचय कीजिये (श्रीअखिल विनयजी)	सं०६-पृ०४०
१६०- शरणागतवत्सल [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०८-पृ०२८
१६१- शिवपुराण-व्रणणकी महिमा	सं०७-पृ०५०
१६२- श्रावणमास और उसके व्रत-पूर्वोत्सव	सं०७-पृ०२०
१६३- श्रीकृष्णद्वारा अर्जुनको उपदिष्ट गीताका सार [आवरणचित्र-परिचय]	सं०१२-पृ०६
१६४- श्रीगंगाजीका तीर्थत्व एवं माहात्म्य (मल्लूकीठाधीश्वर संत श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज)	सं०२-पृ०२०
१६५- श्रीगंगाजीकी रथयात्राका विधान (डॉ० श्रीश्याम गंगाधरजी बापट)	सं०२-पृ०३९
१६६- श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना	सं०१०-पृ०४०
१६७- श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना	सं०१०-पृ०४३
१६८- श्रीभामरी देवीकी कथा [आवरणचित्र-परिचय]	सं०४-पृ०६
१६९- श्रीराधाजन्म-लीलाप्रसंग (श्रीसुरेन्द्रजी त्रिपाठी 'ब्रजरजआश्रित')	सं०९-पृ०३९
१७०- श्रीरामनवमी (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)	सं०४-पृ०९
१७१- श्रीराम-मन्त्रका मूल (पूज्य स्वामी श्रीशिवानन्दजी)	सं०४-पृ०३५
१७२- श्रीसिद्धारूढ स्वामी [संत-चरित] (ह० भ० प० श्रीलक्ष्मण रामचन्द्रजी पांगारकर)	सं०११-पृ०३०



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



KAPWING

विषय	पृष्ठ-संख्या
१७३-संघर्षका कारण और वारण (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)	सं०९-पृ०८
१७४-संतकी दुर्लभता और महत्ता (श्रीभैरवलालजी परिहार) .	सं०२-पृ०३५
१७५-संतवाणी	सं०९-पृ०९
१७६-संत बनों (सन्त श्रीरामचन्द्र केशव डोंगरेजी महाराज) ...	सं०९-पृ०१९
१७७-संन्यासका अर्थ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) ..	सं०११-पृ०३९
१७८-संवत्सरका प्रथम मास—चैत्रमास	सं०४-पृ०४०
१७९-संसार-कूपमें पड़ा प्राणी [आवरणचित्र-परिचय] ..	सं०११-पृ०६
१८०-संसारमें मेरा कौन ? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०२-पृ०१३
१८१-सच्चा साधु	सं०६-पृ०१६
१८२-सतीका शाप [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०८-पृ०३९
१८३-सद्बुद्धिका अभाव (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)	सं०७-पृ०१०
१८४-सन्त टेऊरामजीकी गंगाभक्ति [प्रेषक—प्रेमप्रकाशी साधक]	सं०४-पृ०२१
१८५-सरयूकी अवहेलना अक्षम्य [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी)	सं०४-पृ०३०
१८६-सरलता और आनन्द (पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल एम०ए०) ..	सं०१०-पृ०२६
१८७-सर्वकल्याणकारी वेद (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) ..	सं०८-पृ०१०
१८८-साधक कमलकान्त (श्रीरामलालजी)	सं०५-पृ०३९
१८९-साधकोंके प्रति—(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) ..	सं०२-पृ०१७, सं०३-पृ०१७, सं०४-पृ०१४, सं०५-पृ०१८, सं०६-पृ०१८, सं०७-पृ०१५, सं०८-पृ०१९,

विषय	पृष्ठ-संख्या
सं०९-पृ०१५, सं०१०-पृ०१७, सं०११-पृ०१५, सं०१२-पृ०१७	
१९०-साधन-सूत्र (आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा) ...	सं०२-पृ०२६, सं०८-पृ०२५
१९१-साधनोपयोगी पत्र ..	सं०२-पृ०४३, सं०३-पृ०४२, सं०४-पृ०४३, सं०५-पृ०४३, सं०६-पृ०४४, सं०७-पृ०४०, सं०८-पृ०४४, सं०९-पृ०४२, सं०१०-पृ०३७, सं०११-पृ०४२, सं०१२-पृ०३८
१९२-सार बात (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ...	सं०४-पृ०७
१९३-सिद्ध सन्त श्रीवासुदेवानन्दजी सरस्वती [टेम्बे स्वामी] [सन्त-चरित] (श्रीगणेश वैकटेशजी सातवलेकर)	सं०४-पृ०२७
१९४-सुखके साधन (डॉ० श्रीतारकेश्वरजी मैतिन)	सं०६-पृ०३०
१९५-‘सुख’ सम्पन्नताका मोहताज नहीं (श्रीताराचन्द्रजी आहूजा)	सं०७-पृ०२२
१९६-सुरसाका मुँह (श्रीओमप्रकाशजी पोद्दार)	सं०६-पृ०३७
१९७-सूडानमें गोमाताकी पूजा-अर्चना	सं०१०-पृ०२७
१९८-सूराकाव्यमें राधा (सुश्री डॉ० नीतू सिंहजी)	सं०७-पृ०१८
१९९-स्नेह और रक्षाका पर्व—रक्षाबन्धन (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी)	सं०८-पृ०३०
२००-स्वतन्त्र साधनके लिये प्रेरणा और उसका स्वरूप (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	सं०६-पृ०३९
२०१-स्वाभिमानके वास्ते [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया]	सं०६-पृ०३८
२०२-हिंसाका कुफल (श्रीलीलाधरजी पाण्डेय)	सं०११-पृ०३६
२०३-हिन्दू संस्कृतिमें जलके प्रति पूज्य भाव (वैद्य श्रीबालकृष्णजी गोस्वामी)	सं०१०-पृ०२३
२०४-हे नाथ! हम तुम्हारे हैं (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	सं०११-पृ०१०

पद्य-सूची

१-‘गंगाधर भगवान् शिव और गंगा’ (श्रीसतीशचन्द्रजी चौरसिया ‘सरस’)	सं०८-पृ०११
२-‘जय गंगे तव वारि’ (श्रीगंगालालजी मेहता) [प्रेषक—सुश्री चन्द्रिकाजी भट्ट]	सं०३-पृ०४१
३-जय जय दशरथनन्दन! राम!! (आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र ‘विनय’) ..	सं०१२-पृ०२१
४-जो धेनु आयी न होती (श्रीपारसनाथजी पाण्डेय)	सं०५-पृ०१७
५-दीन गायेँ कह रही कविवर श्रीमैथिलीशरण गुप्त (भारत-भारतीसे)	सं०६-पृ०४२
६-प्रलयकरके प्रति (आचार्य श्रीरसिकविहारीजी मंजुल) .	सं०९-पृ०१६
७-‘बंदौ चरन सरोज तिहारे’ (भक्त सूरदास)	सं०९-पृ०१२
८-भगवान् श्रीकृष्णका नटवरवेश (डॉ० श्रीरामनिवासजी पाठक)	सं०७-पृ०२६

९-माँ (श्रीरंधीरकुमारजी)	सं०५-पृ०२०
१०-माँ (श्रीपुष्पेन्द्रसिंहजी रघुवंशी, बी०ए०, डी०एड०) ...	सं०७-पृ०३५
११-मानव जीवनकी धन्यता (पूज्य स्वामी श्रीपथिकजी महाराज)	सं०१२-पृ०१०
१२-‘मैं सेवक सीतापति मोरे’ (पं० श्रीबाबूलालजी द्विवेदी, ‘मानस मधुप’, साहित्यायुर्वेदरत्न)	सं०१०-पृ०१०
१३-राधा (श्रीशिवचरणजी चौहान)	सं०१०-पृ०१६
१४-रामकी कथा (डॉ० श्रीरोहिताश्वजी अस्थाना)	सं०९-पृ०४०
१५-सङ्कीर्तनम् (आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र ‘विनय’) ..	सं०७-पृ०३८
१६-सरस्वती-वन्दना (डॉ० श्रीगार्गीशरणजी मिश्र ‘मराल’) ..	सं०२-पृ०१०
१७-हे मातु गंगे! [प्रेषक—कार्ष्णि डॉ० श्रीराधेश्यामजी अग्रवाल] ...	सं०३-पृ०३८

संकलित-सामग्री

१-अहल्या-उद्धार	सं०७-पृ०३
२-गंगा सर्वसिद्धिदा	सं०२-पृ०३
३-जय जय जय गणपति गणनायक!	सं०१२-पृ०३
४-‘दोउ चकोर, दोउ चंद्रमा’	सं०९-पृ०३
५-प्रलयपयोधिमें मार्कण्डेयजीको भगवद्विग्रहका दर्शन	सं०६-पृ०३
६-‘भए प्रगट कृपाला’	सं०४-पृ०३

७-भागीरथी-स्तुति	सं०३-पृ०३
८-मत्स्यावतार	सं०११-पृ०३
९-महारास-लीला	सं०१०-पृ०३
१०-माता सारिका देवी	सं०१२-पृ०२८
११-मैयाकी सीख	सं०५-पृ०३
१२-श्रीकृष्णकी गोकुल-यात्रा	सं०८-पृ०३